श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय

(दिल्ली विश्वविद्यालय)

हिंदी विभाग

सुगंधिका

अर्द्धवार्षिक ई-साहित्यिक पत्रिका

अंक-2

31 जनवरी 2019

सुगंधिका

अर्द्धवार्षिक साहित्यिक ई-पत्रिका

अंक-2 **31 जनवरी 2019**

संपादक
डॉ. पूनम सिंह

सह-संपादक
डॉ. उर्वशी

परामर्शदाता
डॉ. साधना शर्मा
डॉ. गीता शर्मा

सहयोग:- समस्त हिंदी विभाग

संपर्क- हिंदी विभाग,
श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय,
पंजाबी बाग, दिल्ली विश्वविद्यालय-110026
दूरभाष-01125224499
वेबसाइट-spm.du.ac.in

समय से संवाद.....

साहित्य-सृजन मात्र एक कृति की रचना नहीं है। यह हमारे मौन को तोड़कर बाहर आने को मचलते विचारों को मुखरित करने की प्रक्रिया भी है। समय की रफ्तार की बाँह पकड़कर यदि कोई उससे संवाद करने की क्षमता रखती है तो वह है सृजनात्मकता। श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय के हिंदी विभाग की ई-पत्रिका के माध्यम से रचनात्मक आवश्यकता के इस ध्येय की पूर्ति करने में संलग्न है। विद्यार्थियों की सृजनशीलता को यह माध्यम एक मंच प्रदान करता है और उनके भीतर के साहित्यकार को अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन का अवसर देता है। युवाओं की शक्ति को रचनात्मक आधार देने में यह पत्रिका सफल रही है। इस महती कार्य के लिए मैं हिंदी विभाग की प्रभारी तथा उनके संपादक सहयोगियों को साधुवाद देती हूँ। पत्रिका अपने सृजनात्मक पथ पर निरंतर आगे बढ़ती रहे। इसके लिए बहुत-बहुत शुभकामनाएँ।

डॉ. साधना शर्मा
प्राचार्या (कार्यवाहक)

संपादकीय

महान गीतकार शैलेंद्र कुमार ने अपने एक गीत में कहा "आसमां पर है खुदा, और ज़मीं पर है हम, आजकल वो इस तरफ देखता है कम, आजकल किसी को वो टोकता नहीं चाहे कुछ भी कीजिए, रोकता नहीं, हो रही है लूटमार, फट रहे हैं बम, आसमां पर है खुदा और ज़मीं पर हम, आजकल वो इस तरफ देखता है कम, किसको भेजे वो यहाँ हाथ थामने, इस तमाम भीड़ का हाल जानने, आदमी हैं अनगिनत देवता हैं कम, आसमां पर है खुदा और ज़मीं पर हम, आजकल..... वहीं संत कबीर कहते हैं:-"अति का भला न बोलना, अति की भली न चूप, अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप।" अर्थात जीवन में किसी भी बात की अति नहीं होनी चाहिए।

उर्दू के महान शायर 'फैज़ अहमद फैज़' ने लोगों की मानसिक दुर्बलता प्रकट करते हुए कहा:-

"बोल कि लब आज़ाद हैं तेरे

बोल, ज़बां अब तक मेरी है।"

ज़बां का अपना होना, ज़बां पर अपने शब्द होना, यह बहुत जरूरी है और यह तभी संभव होगा जब हम तमाम बाहरी शोर से मुक्त होकर अपने भीतर उत्पन्न आवाज़ें सुन पाएँ। शोर भरे जीवन में भी सन्नाटा खोजा जा सकता है। और उसके पलने पर झूलते हुए नगमें गुनगुनाए जा सकते हैं। लेकिन हमारी शिक्षा पद्धति और संस्कारों ने नए विचार के प्रति हमारे स्वभाव में एक विरोध भर दिया क्योंकि सदियों से हमें स्थापित का सम्मान करना सिखाया गया है और विचार तथा कई क्षेत्रों में प्रश्न करने को जाने क्यों सम्मान करने का विरोध माना गया है। किसी भी वस्तु का पुनरावलोकन होना जरूरी है। अपनों की फिक्र करना लेकिन बेजाँ बातों की मुखाल्फ़त करना भी ज़रूरी है।

संकीर्ण विचारों की कोई हद नहीं होती। व्यवस्था और बाज़ार ने मिल कर संवेदनाहीन मनुष्यों की तादाद में इज़ाफा कर दिया है, जो बोलने के समय पर तो चुप्पी धारण किए रहते हैं और चुप रहना हो तो 'उपस्थिति' भी शून्य हो जाती है। आम आदमी प्रायः पंचिंग बैग पर ही प्रहार करता रहता है और यथार्थ के रिंग में जाना ही नहीं चाहता, सभी को अपने स्तर (स्ट्रेटस) का खयाल है और कुछ चाटुकार सारा जीवन पंचिंग बैग ही बने रहते हैं।

शब्द कम लेकिन अर्थ बहुत हैं, हिंदी का पाठक होने के यही फायदे हैं कि आप प्रत्येक शब्द की व्याख्या अपनी क्षमतानुसार कर सकते हैं। ख़ैर.....

हिंदी विभाग की ई-पत्रिका 'सुगंधिका' के दूसरे अंक को आप सभी के हाथों में सौंपते हुए मुझे अत्यंत खुशी महसूस हो रही है। कुछ रचनाएँ पेड़ के पके हुए उन फलों की हैं जो कॉलेज की मिट्टी में रच बस गए, कुछ रचनाएँ उन फूल-फलों की हैं जो अभी कॉलेज की मिट्टी में पक रहें हैं तथा कुछ रचनाएँ उन कोपलों-कलियों की भी हैं जो धरती के गर्भ यानि अपनी अध्यापिकाओं के सानिध्य में पनप रही हैं।

नववर्ष एवं आगामी भविष्य के लिए ढेर सारी शुभकामनाएँ .....

डॉ.पूनम सिंह

(विभाग प्रभारी)

अनुक्रमणिका

समय से संवाद

संपादकीय

चिंतन-मनन

- नारी मुक्ति का संघर्ष-पुरुष से? नहीं- डॉ. नीलम गुप्ता 1
- बोलना ज़रूरी है- डॉ.शगुन अग्रवाल 6
- मानव जीवन है-अमूल्य- भावना 9
- भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति-डॉली 10
- आज का युग –रिंकी 11
- मीडिया: लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ- वरीशा खातून 11
- हिंदी हमारी पहचान- हिमांशी 12
- घर से निकलते ही- दीक्षा 13

काव्य

- कन्या प्रश्न- डॉ.राधिका सिंह 14
- उलझन- डॉ.राधिका सिंह 15
- मुझे न मालूम था- डॉ.राधिका सिंह 16
- गीत- डॉ.राधिका सिंह 16
- चुनिंदा मुक्तक- डॉ.राधिका सिंह 17
- मैं जीना चाहती हूँ- शिवांगी गुप्ता 18
- सूर्यास्त- सलोनी 20
- मेरे वतन- आरती 20
- माँ- दीपांशी तिवारी 20

- शिक्षा- आरती 21
- बेटियाँ- ललिता 21
- नारी- सुमन 22
- बचपन- आयशा अंसारी 22
- यारियाँ- साक्षी जायसवाल 23
- वक्त- आयशा अंसारी 24
- ज़िंदगी- तपस्या 24
- बचपन- ज्योति 24
- माँ- प्रतिमा 25

विरासत

- प्रेमचंद कैसे बने मुंशी प्रेमचंद ? 26

जन्मशती

- गिरिजा कुमार माथुर की जन्मशती पर उनका स्मरण 26

स्मृति-शेष

- यादों के झरोखे से- मुन्नी 27

किस्सा

- बूढ़ी मौसी- सपना मिश्रा 28
- विरासत- नेहा 29

पगडंडियाँ

- मेरी हिमाचल यात्रा- हिमांशी 30

रेडियो वार्ता

- रेडियो डायरी से प्रस्तुत है रेडियो वार्ता- डॉ.विभा नायक 31

रिपोर्ट

- साहित्यिक गतिविधियाँ 36

*** चिंतन-मनन**

नारी मुक्ति संघर्ष-पुरुष से? नहीं..

नारी के लिए समानाधिकार उन्मुक्तता मुक्ति की माँग की चर्चा लगभग हर गोष्ठी में, हर परिचर्चा में, बुद्धिजीवियों की सारी बहसों में उठाई जाती है। नारी मुक्ति का क्या अर्थ है, नारी मुक्ति क्या है ?-कोश के अनुसार मुक्ति का अर्थ है- छुटकारा, मोक्ष। जन्म मरण रूपी बंधन से छुटकारा है। इसमें जप तप या एकाग्र भाव से साधना की आवश्यकता होती है।

इसका अर्थ छुटकारे से भी नहीं। इसका अर्थ छुटकारे के लिए होता तो स्त्री खुशी खुशी विवाह के बंधन में न बंधती। पत्नीत्व और मातृत्व को बड़े गौरव से स्वीकार न करती। अतः यहाँ मुक्ति शब्द का एक ही अर्थ है। वह है आज़ादी.....। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि कौन सी कैद है ? कौन सी गुलामी है ? जिससे नारी मुक्त होना चाहती है। सही अर्थों में वर्तमान विश्व में सभी स्तरों पर समानता की माँग का सिरा मुक्ति से जुड़ा हुआ है। मुक्ति उन्मुक्ति की परिसीमा तक स्त्री को सब कुछ में हिस्सेदारी की न्यायपरक व्यवस्था समाज को स्वीकार करनी पड़ेगी। नारी मुक्ति जैसे शब्द कहाँ से आए ? इन सभी जिज्ञासाओं का स्पष्टीकरण देते हुए विभा कहती हैं-"प्राचीन काल से ही अपने यहाँ नारी को शक्ति, देवी और न जाने क्या-क्या कहा गया है, जो आज भी जारी है। मगर इन सबके पीछे नारी को जो रूप दिया गया, वह तमाम वर्जनाओं, निषेधों और सीमाओं से भरा रहा। धार्मिक और सामाजिक मान्यताएँ गढ़ कर, संस्कार और पाप-पुण्य की परिभाषाएँ बनाकर उन्हें उनके दायरों में बंद कर दिया जाता है, अगर सिर्फ बंद ही किया जाता तब भी गनीमत थी.....उनके पीछे उन्हें अपमानित, पीड़ित करने की जो परंपरा चल पड़ी उसने उनके अस्तित्व और उनकी उपयोगिता पर प्रश्न चिह्न लगाए। इन्हीं सब प्रश्नों ने 'नारी मुक्ति' 'वर्जनाओं से छुटकारा' जैसे शब्द और परिभाषाएँ भी दीं।"

श्रीकांत कुलश्रेष्ठ कहते हैं- "नारी मुक्ति का तात्पर्य उसके व्यक्तित्व को पहचानने में उसकी मदद करना था। उसे जीवन जीने की कला सिखाना था। भारतीय नारी का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि जीवन के विभिन्न सद्गुणों से संपन्न होते हुए भी वह जीने की कला से अनभिज्ञ है।"

नारी मुक्ति के अर्थ के विषय में बात करते हुए रमणिका गुप्ता कहती हैं कि-"स्त्री मुक्ति की अवधारणा

भिन्न-भिन्न समाजों में विकास के भिन्न-भिन्न स्तरों व भौगोलिक परिस्थितियों के कारण भी अलग-अलग होती है.....स्त्री मुक्ति के कई अर्थ हो सकते हैं।"

1. स्त्री के द्वारा स्वयं के निर्णय को सामाजिक स्वीकृति दिलाना।
2. वह स्वायत्ता हासिल करना जिसमें उसे ज़िंदगी को खुद संयोजित करने की आज़ादी है।
3. स्त्री और पुरुष की समानता यानि लिंग के आधार पर भेदभाव न होना।
4. पुरुष वर्चस्ववाद व उनकी हिंसा का प्रतिरोध करना और नकारना।

स्त्री, पुरुष की स्वामित्ववादी प्रवृत्ति की विरोधी है। इस संदर्भ में अनामिका कहती हैं-"स्त्री आंदोलन प्रतिशोध पीड़ित नहीं है-इन्हें न्याय चाहिए पर ये जानती हैं कि अन्याय का प्रतिकार अन्याय नहीं है एक दमन-चक्र का जवाब दूसरा-चक्र नहीं है।"

पुरुष शासित इस समाज में सदैव नारी को दोयम दर्जे का नागरिक माना गया। पश्चिम में इसे बैटर हाफ कहा गया है। भारत में अर्धनारीश्वर की कल्पना की गई है। किंतु व्यवहार में हमेशा नारी को यही शिक्षा दी जाती है कि पति देवता है, स्वामी है। स्त्री को समस्या तब हुई जब पुरुष सखा से शासक बन बैठा। नारी को पति रूप में साथी प्राप्त न होकर तानाशाह प्राप्त होने लगा। जिसे इस बात का संपूर्ण अधिकार प्राप्त था कि पत्नी चाहे जैसे प्रताड़ित करे। नारी ने बहुत लंबे समय तक शारीरिक उत्पीड़न, मानसिक उत्पीड़न, यौन उत्पीड़न सब कुछ सहन किया। नारी के लिए इन प्रताड़नाओं को सहना असह्य हो गया जब यह उत्पीड़न अपने चरम पर पहुँच गया। धीरे-धीरे नारी के इस उत्पीड़न, वर्जनाओं, निषेधों के खिलाफ स्वर गूँजने प्रारंभ हुए।

मुक्ति का अर्थ उन प्रताड़नाओं से मुक्ति है, जो उसे अपना जीवन समाप्त करने के लिए विवश करती थीं। उसकी मुक्ति का अभिप्राय था उन दोहरे मानदंडों से मुक्ति जो पुरुष को ईश्वर बना देते हैं और नारी को इंसान भी नहीं बने रहने देते। स्त्री ने मुक्ति चाही उस परंपरा से जो उसे हाड़-माँस का जीवित इंसान न समझ कर उसे वस्तु के समान दान कर देती है। मुक्ति चाहिए उन बंधनों से जो उसकी प्रतिभा के विकास का समस्त अधिकार छीन लेते हैं। आज तक स्त्री इसी मुक्ति की कामना के लिए संघर्षरत है। अर्चना प्रियंवदा, हेमांगिनी रानाडे तथा रमणिका गुप्ता के विचार इस प्रकार हैं-

अर्चना प्रियंवदा जौहरी कहती हैं कि यहाँ नारी मुक्ति आंदोलन से क्या अभिप्राय है ? नारी मुक्ति आंदोलन के सवाल में तीन चीजें प्रमुख हैं।

1. स्त्री को मुक्ति किससे चाहिए क्या पुरुष से ?
2. क्या स्वयं नारी से ?
3. समाज के द्वारा उसके बनाए गए नियमों, संकीर्ण दायरों और दमघोंटू प्रथाओं से ?

"अगर दूसरी, और तीसरी बात है तो शायद स्त्री के इरादों में सच्चाई है। अन्यथा नारी मुक्ति की बात आते ही इसका सीधा संबंध पुरुष से जोड़ दिया जाता है। वहीं हम भटक जाते हैं।"

हेमांगिनी रानाडे कहती हैं-"औरत भी मनुष्य है और मनुष्य के नाते उसे वह सब कुछ मिलना चाहिए

जिससे वह आज तक वंचित रखी गई है। दूसरी तरफ चूंकि वह पुरुष नहीं है। नारी है, उसके इस नारीत्व और मातृत्व को मद्देनजर रखकर स्त्री को वे सभी अधिकार मिलने चाहिए जिससे वह सही में अपनी जाति का प्रतिनिधित्व कर सके।"

रमणिका गुप्ता कहती हैं कि- "स्त्री मुक्ति स्त्री को उसके गुण दोषों समेत पुरुष द्वारा अपने बराबर स्वीकार किए जाने की अपेक्षा रखती है ताकि स्त्री भी पुरुष के समकक्ष हर काम में साथ दे और फैसले ले। स्त्री, पुरुष की अनुरागिनी नहीं बल्कि साथी बनना चाहती है। स्त्री चाहे कितनी भी सक्षम होकर किसी भी रुतबे या पद पर पहुँच जाए पुरुष उसे मनुष्य की तरह देखता ही नहीं। पुरुष स्त्री को सैक्स की दृष्टि से ही देखता है और एक कमजोर इकाई मानता है।-विरोध इसी सोच का है।"

नारी मुक्ति की बात करते समय यह प्रश्न उठता है कि इसका अभिप्राय क्या है ? नारी मुक्ति या मुक्त नारी ? मुक्त नारी से अभिप्राय यह लिया जाता है कि एक ऐसी स्त्री जो किसी बंधन को नहीं स्वीकारती, उन्मुक्त भाव से विचरण करना चाहती है। मर्यादाओं के किसी बंधन को स्वीकार नहीं करती। स्वतंत्रता के नाम पर उच्छृंखलता का भोग करना चाहती है। जो मुक्ति के नाम पर श्रेष्ठ परंपराओं को भी तोड़ देना चाहती है। जिसकी स्वछंदता परिवार टूटने का कारण बन सकती है। ग्रामीण परिवेश में या 'शहरी परिवेश की भी अशिक्षित नारी के सामने यदि नारी मुक्ति की बात करें तो वह अबूझ सी आपकी ओर देखती रह जाएगी। परिवार ही उसका संसार है। पति ही उसका ईश्वर है। भले ही उस पति ने उसके लिए स्वर्ग की नहीं नरक की रचना की हो। यदि सहनशक्ति जवाब दे जाए तो पोखर में कूदकर आत्महत्या कर लेती है।

नारी मुक्ति से क्या अभिप्राय है। इस संबंध में प्रसिद्ध लेखिका जयंती कहती हैं-"ये लड़कियाँ तो जीने के लिए एक साँस भर चाहती हैं जो उन्हें उपलब्ध नहीं होती। कहीं राजनीति, कहीं परिवार, कहीं संस्कार, तो कहीं कानून आड़े आ जाता है। 1993 के नीरजा भनोट पुरस्कार से सम्मानित शहनाज़ शेख का कहना है-"मेरे ख्याल से हमारे देश में सिर्फ दो प्रतिशत स्त्रियाँ ऐसी सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखें तो चाहे स्त्री पढ़ी-लिखी हो या अनपढ़, उसके जीने का ढाँचा दूसरे तैयार करते हैं। स्त्री का शरीर भी उसका अपना नहीं है ? वह यह निर्णय तक स्वयं नहीं ले सकती कि उसे कब माँ बनना है। पुरुष नारी को इसी स्थिति में रखना चाहते हैं कि वह पूरे जीवन उसके अधीन ही रहे। विश्व की पहली नारीवादी वुलस्टोन क्राफ्ट ने कहा था- "दुनिया की तमाम स्त्रियाँ वह चाहे बौद्धिक, कवयित्री, इतिहासकार, राजनैतिक कार्यकर्ता एवं गृहणी हों, समवेत स्वर में सभी यह स्वीकार करें कि स्त्री को पुरुष के बराबर अधिकार मिलना चाहिए।

तो क्या यह मान लेना चाहिए कि कौमार्य से लेकर वृद्धावस्था तक नारी को पहले पिता, फिर पति और फिर पुत्र के संरक्षक में रहना चाहिए क्योंकि स्त्री स्वतंत्रता के योग्य ही नहीं है। सुरक्षा के नाम पर नारी को सदियों तक कैद रखा और पुरुष को पहरेदार बना दिया गया। बंधन पुरुष की आसक्ति और वासना पर नहीं वरन नारी की ज़िंदगी पर लगाए गए। नारी अपने ऊपर होते हुए शोषण और अत्याचारों की सुनवाई कहीं नहीं कर सकती थी क्योंकि अपराधी भी पुरुष ही

था और न्यायधीश भी वही। इन्हीं स्थितियों ने नारी को यह सोचने को मजबूर कर दिया कि सुरक्षा के नाम पर उसे जिस पिंजरे में कैद किया गया था, अब बहुत दिनों तक उस पिंजरे में रहना उसके लिए संभव नहीं था। वास्तविकता तो यह है कि 'नारी मुक्ति' केवल शब्द नहीं एक आवश्यकता है। स्त्री का शारीरिक अंतर प्राकृतिक है, स्त्री की माहवारी, गर्भधारण और माँ बनना प्राकृतिक है। त्याग, ममता, दया, सेवा औरत के खून में नहीं है, उसे घुट्टी में पिलाई जाती है। उसी प्रकार आक्रामकता, रौब, हिम्मत बेहतरी का अहसास पुरुष को बचपन से समाजीकरण के जरिए सिखाया जाता है।

नारी को पुरुष से नहीं पुरुष के अत्याचारों से मुक्ति चाहिए। परंतु जब उसकी हर इच्छा पर प्रतिबंध लगा दिया जाता है तो वह स्वयं मुरझा जाती है। नारी को पुरुष का प्रेम तो चाहिए ही उसकी मजबूत बाँहों का सहारा भी चाहिए। उसे भी परिवार की सुरक्षा चाहिए। उसे भी किसी अपने के कंधे का सहारा चाहिए जिस पर सिर टिकाकर वह अपने मन का सुख-दुख बाँट सके। पर यह सब संभव नहीं हो पा रहा है। न किसी जाति में, न किसी धर्म में, इसीलिए नारी के स्वरों का उद्घोष जारी है। मुक्ति को खंड-खंड करके नहीं देखा जा सकता। स्त्री को संपूर्ण आज़ादी चाहिए।

बटीना कहती हैं- "पति-पत्नी होने के नाते दोनों परस्पर सहयोग ही क्यों, सहभागी और पूरक क्यों नहीं ?.....वैसे भी भारतीय संस्कृति सदा से लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा के तीनों रूपों को अकारण ही नहीं पूजती रही है। समाज का कल्याण इन तीनों मातृगुणों के समन्वय से संभव है। नारी मुक्ति की अवधारण का यह स्वरूप अपने आप में पूरी तरह स्पष्ट है। नारी को मुक्ति पुरुष से नहीं चाहिए, समाज से भी नहीं वरन् उसे उत्पीड़न से मुक्ति चाहिए। नारी को दिए गए ये अधिकार समाज के लिए लाभकारी ही होंगे।

एक शिक्षित, स्वतंत्र सोच रखने वाली, व्यक्तित्व संपन्न नारी समाज को विकास के विभिन्न मार्गों पर अग्रसर करेगी क्योंकि वह जन्मदात्री भी है और पालन करने वाली भी। वह बच्चों को संस्कार भी देती है और परिवार की धुरी भी है। अतः नारी की मुक्ति जहाँ उसके अपने विकास के लिए आवश्यक है वहीं समाज और देश के लिए भी उसकी मुक्तता उतनी ही आवश्यक है।

वैदिक काल में सम्मानजनक स्थान की अधिकारिणी भारतीय समाज की स्थिति शनै:-शनै: पतनोन्मुखी होती हुई एक ऐसी स्थिति तक पहुँच गई जहाँ उसे गुलामों से भी बदतर ज़िंदगी जीने के लिए विवश कर दिया गया। नारी के हिस्से केवल और केवल कर्तव्य हैं। वह केवल भोग्या है। आज नारी पुरुष को अपना शासक मानने से इंकार कर रही है। वह अपने लिए समान सुविधाएँ और अधिकार माँगती है और न मिलने पर उनके लिए आवाज़ उठाती है। जुलूस निकालती है, आंदोलन करती है और निरंतर संघर्ष करती हुई अपने अधिकार प्राप्त करती है।

उत्तरवैदिक काल से जैसे-जैसे बंधन क्रमश: कसते गए होंगे उनमें मुक्ति की चाह भी बलवती होती गई होगी।

नारी अपनी उस सम्मानजनक स्थिति को लौटाने की बात करती है तो उसे प्राचीन काल में प्राप्त

थी । भारत में प्रारंभिक महिला समितियाँ पुरुष द्वारा प्रारंभ की गई और पुरुषों के नेतृत्व में ही उन्होंने कार्य किया।

बंगाल की अध्यक्षता में ब्रह्म समाज और बंबई की अध्यक्षता में प्रार्थना समाज संगठनों ने नारी के जीवन को बेहतर बनाने का प्रयास किया । श्री रवीन्द्र नाथ टैगोर ने महिलाओं पर निबंध लिखे । 1882 में स्वर्ण कुमारी ने 'महिला ब्रह्म विद्या समाज' की स्थापना की । जो कलकत्ता में 1882 से 1886 तक रहा। यह सभी धर्मों की महिलाओं के लिए था। उन्होंने एक महिला संगठन शक्ति समिति की स्थापना की।

इस संगठन के प्रमुख कार्य।

1. महिला द्वारा बनाई गई हस्तशिल्प की वस्तुओं के लिए वार्षिक मेला लगाना।
2. भारत के उत्पादों और कारीगरी की वार्षिक प्रदर्शनी लगाना।

14 जनवरी 1848 को पुणे के बुधवार पेठ निवासी भिड़े के बाड़े में ज्योतिबा फुले ने पहली कन्या पाठशाला की स्थापना की। राजा राममोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर जैसे सुधारक तो नारी की स्थिति सुधारने के लिए कृत संकल्प थे। विभिन्न संप्रदायों के सुधारोंन्मुखी नेताओं बेहराम जी मालवरी (पारसी) दयाराम राहु मंडल (गुजराती) और रमाबाई रानाडे (महाराष्ट्रियन) ने सभी संप्रदायों की महिलाओं की सेवा के लिए तत्पर सेवा सदन की स्थापना की।

महिला समितियाँ नारी से संबंधित विभिन्न समस्याओं को लेकर कहीं जनसामान्य के सहयोग और कहीं असहयोग का सामना कर रही थीं । असहयोग आंदोलन में गांधी जी द्वारा नारियों के सहयोग की अपेक्षा ने उनके इस संघर्ष को विकसित और उत्साहित किया । गांधी जी ने महिलाओं को सत्याग्रह आदि अभियान में शामिल किया किंतु उनकी सहभागिता को हमेशा नियंत्रित रखा। गांधी जी का महिला आंदोलन के विकास पर इतना गहरा प्रभाव अवश्य पड़ा कि उनकी विचारधारा और शैली ने महिलाओं को जन कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए प्रेरित किया।

विभिन्न संगठनों और समितियों के माध्यम से नारी अपने अधिकारों से परिचित हुई । सामाजिक समानता व समान नियम कानूनों की माँग की, दहेज प्रथा, सती प्रथा, बाल विवाह, पर्दा प्रथा जैसी प्रथाओं का विरोध किया । वहीं वह अपने राजनीति और आर्थिक अधिकारों के लिए भी सजग हुई। मुक्ति संघर्ष से नारी ने शिक्षा, राजनीति, अर्थ आदि विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न आयाम प्राप्त किए है । विभिन्न कानूनी अधिकार प्राप्त करने के बाद भी समाज नारी को समानता का दर्जा देने के लिए तैयार नहीं है। यह संघर्ष जारी रहेगा जब तक समाज द्वारा नारी को समानता का अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता । नारी मुक्ति अभियान अभी भी अपनी मंजिल तक नहीं पहुँच सका है । आज़ादी का जो मुट्ठी भर आकाश उसने चाहा था वहाँ से कोहरा छटा तो है, पर आकाश अभी पूरी तरह साफ नहीं है । नारी को दोयम दर्जे का नागरिक मानना उसे केवल भोग्या मानना या यह मानना कि नारी को हमेशा वही करना है जो पुरुष चाहता है । पुरानी मान्यताओं के बादल अक्सर उसकी मुक्ति के सूरज को ढक लेते हैं । नारी को आज़ादी, कानूनी अधिक है, सामाजिक कम

। पुरुषों की नारी के प्रति मानसिकता अभी पूरी तरह बदली नहीं है।

पुरुष, महिलाओं में, सुधार को लेकर बड़ी-बड़ी बातें करते हैं। कदम से कदम मिलाकर चलने और हर संभव मोर्चे पर पूर्वतः सहयोग की बात करते हैं। लेकिन जब बात जमीन पर आती है तब कहीं न कहीं उनका पुरुष अहं आड़े आ जाता है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि नारी ने अपने मुक्ति संघर्ष के अभियान में बहुत कुछ प्राप्त किया है, अभी बहुत कुछ पाना बाकी है। आज उसे शिक्षा का अधिकार है। वह प्रशासनिक ऑफिसर है, शिक्षिका है। ऊँचे से ऊँचे ओहदे पर पहुँच कर उसने अपनी योग्यता को तो सिद्ध किया है। पर अभी समाज की सोच में बदलाव लाना आवश्यक है। आजकल दूरदर्शन में सीरियल "मैं मायके चली जाऊँगी" आ रहा है। यह सीरियल इसी दिशा में बढ़ता हुआ एक सफल और सार्थक कदम है। स्त्री का संघर्ष तभी सार्थक होगा जब कानून के साथ साथ समाज भी उसे समानता का दर्जा देगा।

अभी तक परिस्थितियों के कारण भूस्वामित्व में उसके हिस्से को अस्वीकारने की प्रवृत्ति है। असली आज़ादी तो तभी होगी जब उसे सामाजिक समरसता का सही भागीदार स्वीकार किया जाएगा। प्राचीनता का ढिंढ़ोरा पीटने वाली वृति से उसे मुक्त किया जाएगा।

-डॉ. नीलम गुप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
(सेवानिवृत्त सदस्य)

बोलना.....जरूरी है

सबसे खतरनाक होता है मुर्दा शांति से भर जाना
तड़प का न होना
सब कुछ सहन कर जाना

अवतार सिंह संधू उर्फ पाश ने जब ये पंक्तियाँ लिखी होंगी तो निश्चित ही उनके मन में अपने समय और समाज के लिए गहरी संवेदना और लगाव के साथ उतना ही गहरा असंतोष और आक्रोश भी रहा होगा। जीवन से स्पंदित, सजग अपनी प्रकृति में दीर्घकालिक और लोकतांत्रिक शांति की बहाली के लिए व्यक्ति का अशांत, असंतुष्ट और बेचैन होना निहायत ही ज़रूरी है, इसमें कोई दो राय नहीं हो सकती।

समय, स्थान और मर्यादा को ताक पर रखकर हँसना, बोलना जितना घातक होता है, उतना ही घातक समय, स्थान और मर्यादा से नज़र चुराकर, सिर

झुकाकर चुप रह जाना भी। इसका सर्वोत्तम उदाहरण है अतिथि रूप में आए दुर्योधन को "अंधे का पुत्र अंधा" कहकर द्रौपदी का हँसना और फिर हस्तिनापुर की राजसभा में कुलवधू के सार्वजनिक अपमान पर सभी का चुप रह जाना।

वर्तमान समय में जबकि समूचा विश्व हिंसा और आतंक से जूझ रहा है, शर्मनाक तरीके से सर्वत्र मानवाधिकार का हनन हो रहा है, पश्चिम से लेकर पूर्व "Me Too" आंदोलन छिड़ा हुआ है – चौकन्ना रहना, सुनना, गुनना, बोलना, बहस करना और जरूरत पड़े तो पक्ष लेना अनिवार्य हो गया है। पक्ष लेना उन लोगों का जो अन्याय और अत्याचार का शिकार हैं, पक्ष लेना उन मूल्यों का जो ज़्यादा पारदर्शी, ईमानदार, सुरक्षित समाज बनाने में सहायक है। शांति का आधार सुशासन होना चाहिए चुप्पी नहीं। इसी बात को श्रीकांत वर्मा ने बड़े तीखे व्यंग्य के साथ अपनी कविता 'हस्तक्षेप' में उठाया है –

"कोई छींकता तक नहीं

इस डर से

कि मगध की शांति

भंग न हो जाए,

कोई टोकता तक नहीं

इस डर से,

कि मगध में

टोकने का रिवाज न बन जाए।"

हस्तक्षेप करने, आँख में आँख डाल बोलने और ज़रूरत पड़े तो चीखने के रिवाज को बनाए रखना स्वस्थ समाज को बनाने की अनिवार्य शर्त है। अभी हाल ही में निडर होने और अपने मत को बेबाकी से बोलने की जरूरत को रेखांकित करने वाली दो बेहतरीन कविताएँ पढ़ी, आपके साथ साँझा करना चाहूँगी।

बोलती हुई औरतें .....

बोलती हुई औरतें
कितनी खटकती हैं ना.....
सवालों के तीखे जवाब देतीं
बदले में नुकीले सवाल पूछतीं
कितनी चुभती हैं ना.....

लाज स्त्री का गहना है
अब आदर्श वाक्य को मुँह चिढ़ाती
तमाम खोखले आदर्शों को,
अपनी स्कूटी के पीछे बाँध कर खींचती
घूरती हुई नज़रों से नज़रे भिड़ाती

कितनी बुरी लगती है ना औरतें
सदियों से हमें आदत है
झुकी गर्दन की जिसे
याद हो जाए पैरों की हर एक रेखा....
जिसका सर हिले हमेशा सहमति में

जिसके फैसले के अधिकार की सीमा
सीमित हो महज रसोई तक.....
अब.....जब पूजे जाना नकार कर
वो तलाश रही है अपना वजूद
तो नजाने क्यों हमें

खटक रहा है उनका आत्मविश्वास
खोजने लगे हैं हम तरीके
उसे ध्वस्त करने के.....
हर कामयाब स्त्री हमारे लिए ,
समझौते के बिस्तर से आए
व्याभिचार का प्रतीक है
हर आधुनिक महिला चरित्रहीन
और हर अभिनेत्री वेश्या.....
जींस पहनना चालू होने की निशानी है
और शॉर्ट्स वालियों के तो
रेट्स भी पता है हमको.....

सवाल पूछती औरतों को
चुप कराने का
नहीं कोई बेहतर उपाय की
घसीटों उन्हें चरित्र की अदालत में
जहाँ सारे नियम, सभी कानून
है पुरुषों के, पुरुषों द्वारा .....
जिनकी आड़ में छुप जाएँगी
वो तमाम ऐयरियाँ, नाइंसाफियाँ
जो हमेशा हक रही हैं मर्दों का

बोलती हुई औरतों.....
अब जब सीख ही रही हों बोलना
तो रुकना नहीं कभी
पड़े ज़रूरत तो चीखना भी
लेकिन खामोश न होना.....
तुम्हारी चुप्पी ही,
सबसे बड़ी दुश्मन रही है तुम्हारी

-मुबारक अली

जायरा वसीम को प्यार

डरो नहीं, समझो, डर तो वे रहें हैं।
वे ज़िंदगी कि खूबसूरती से डरते हैं इसलिए उसे खत्म करना चाहते हैं।

वे डरते हैं बिना आँचल की लड़कियों से
वे डरते हैं सीधे उनकी आँखों में आँखें डाल कर देखने वालियों से।

वे डरते हैं खेल कूद से, बच्चियों के शोर से, फन से,
फनकारी से, मौसीकी से, गुलुकारी से।
वे डरते हैं हरी भरी वादियों से।

जो खत्म कर देना चाहते हैं तहज़ीब को,
रूहानियत को, वे गोली चलाते हैं मलाला युसुफज़ई पर

पर उनकी गोलियों से ज़िंदा बच कर वही आता है, जो डरता नहीं है।

यह मंतर याद रखो, वे नहीं डरने वालों से बहुत डरते हैं

ज़िंदगी की रोशनी में उनकी आँखें चौंधिया जाती हैं।

इसलिए वे अपने साथ हम सबको खींच लेना चाहते हैं घुप्प अँधेरे में।

डरों नहीं, ललकारों उन्हें कुश्ती के दंगल में और चित कर दो।

- फ़रीद खाँ

-डॉ. शगुन अग्रवाल
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग

मानव जीवन है -अमूल्य

आज हम आधुनिक युग में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इस जीवन ने हमें बहुत कुछ प्रदान किया है। मानव जीवन का मूल्य उन्हीं में से एक है। आज कल के जीवन में हमने इंसानियत को कहीं खो दिया है । आज एक इंसान दूसरे इंसान का दुश्मन बनकर बैठा है। मानवीयता का हमारे जीवन में कोई मूल्य नहीं रहा है। आज हम सब जानते हैं कि यह संसार मिथ्या है। यह क्षण भंगुर है, हमेशा रहने वाला नहीं है फिर भी हम किसी न किसी विषय को लेकर लड़ जाते हैं और एक-दूसरे के ही दुश्मन बन जाते हैं। तभी तो कहा गया है कि 'मानव की कद्र करें दिल से, मानवता खिल उठे फिर से' । आज के युग में बैर, नफरत, ईर्ष्या और द्वेष की अग्नि में संपूर्ण संसार जल रहा है और जहाँ कहीं हमें एक दूसरे की कद्र करनी आ जाएगी वहीं पर पवित्रता और शीतलता भी जाएगी। अगर हम सभी में प्रेम की भावना उत्पन्न हो जाए तो हमें मानव जीवन का मूल्य भी समझ में आ जाएगा और सभी एक–दूसरे को समझने लगेंगे। सबसे पहले इसकी शुरुआत हमें खुद से ही करनी होगी क्योंकि दूसरों को समझाने से पहले हमें खुद को ही समझना होगा तभी हम संसार को बदल पाएँगे। अतः तभी संसार में मानवीयता का मूल्य बच पाएगा।

आज हर स्थान पर नफरत की आग लगी हुई है। हम सभी जानते हैं कि यह जीवन बस एक बार ही प्राप्त होता है, हमें इसकी कद्र कर लेनी चाहिए। कहा जा सकता है कि चौरासी लाख योनियों के पश्चात हमें मानव शरीर प्राप्त होता है और सभी योनियों में हम जीव, जंतु, कीड़े-मकौड़े और न जाने क्या-क्या बनते हैं। कहा भी जाता है:-

"मानुष जन्म दुर्लभ है,

होत न बारंबार"

इसलिए हमें समय रहते मूल्यांकन कर लेना चाहिए क्योंकि 'तब पछताएँ होत क्या, जब चिड़िया चुग गई खेत' हम सभी को अभी संभलना होगा। बड़े को छोटे को और छोटे को बड़े को सम्मान देना चाहिए क्योंकि जब हम छोटों से प्यार करेंगे तभी वे भी बड़ों के साथ वैसा ही व्यवहार करेंगे। यदि सभी इस बात को जान जाए कि सभी चीज़ें क्षण भंगुर हैं, कुछ भी

सदैव रहने वाला नहीं है तो मानव के मानव से ईर्ष्या, द्वेष, कलह आदि विकारों का अंत हो जाएगा । यहाँ कहना गलत न होगा कि:-

'क्या लेकर आया बंदे, क्या लेकर जाएगा,
मुट्ठी बाँधे आया बंदे, हाथ पसारे जाएगा '

किसी को भी यह ज्ञान नहीं है कि उसका अंतिम समय कौन सा है तो फिर किस बात की लड़ाई, किस बात का झगड़ा । छोटी सी ज़िंदगी, सभी से प्रेम करो तभी मानवीयता खिल उठेगी । हम सभी इस बात को जानते है कि कुछ भी साथ जाने वाला नहीं है । आज घर-घर में बँटवारे के पीछे लड़ाई है । हर घर में क्लेश है, यह जानते हुए भी कि साथ कुछ भी जाने वाला नहीं है, फिर भी लोग लड़ाई कर रहे हैं । इसलिए हमें खुद संभलना होगा और सभी को समझना होगा कि यह ज़िंदगी दो पल की ही है । यह पानी का वह बुलबुला है जो कभी भी खत्म हो सकता है । इसलिए कहते हैं कि 'माटी के पुतले इतना न इतरा के चल' तेरे जीवन का कोई भरोसा नहीं, बूँद पड़ते ही पिघल जाएगा कच्चे बर्तन का कोई भरोसा नहीं । इसलिए प्रेम और नम्रता, सहनशीलता वाला जीवन व्यतीत करना चाहिए । जहाँ प्रेम है, वहाँ नफरत, बैर, ईर्ष्या और द्वेष का कोई स्थान नहीं है । अतः सभी से प्रेम करो तभी मानव जीवन का मूल्य हम समझ पाएँगे ।

-भावना
बी.ए. प्रोग्राम (द्वितीय वर्ष)

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति

वर्तमान समय में समाज आधुनिकता की ओर अग्रसर हो रहा है । लेकिन इस आधुनिक दौर में भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति दिन-प्रतिदिन शोचनीय होती जा रही है । समाज में महिलाओं को जो स्थान, अधिकार, सम्मान प्राप्त होना चाहिए, उन्हें प्राप्त नहीं हो रहे हैं । इसका कारण समाज का पुरुष प्रधान होना है, क्योंकि पुरुषों ने कभी भी किसी स्त्री को आगे बढ़ने नहीं दिया सदैव उन्हें नीचा समझा और समाज के सबसे कमजोर वर्ग में डाला ।

पुरुषों ने सदैव महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार, अन्याय उनके अधिकारों का शोषण किया है । हमेशा उन्हें अपने से कम आँका है । पुरुषों ने सदैव ही महिलाओं को उनके अधिकारों से वंचित रखा है । उनका मानसिक, सामाजिक तथा शारीरिक रूप से शोषण किया है, उन्हें सदैव कमजोर आँका है । क्योंकि भारतीय समाज पुरुष प्रधान समाज है इसलिए आज तक महिलाएँ समाज के विकास में कभी अपना पूर्ण योगदान नहीं दे पाई हैं । समाज में पुरुषों ने महिलाओं पर कुछ ऐसे नियम-कानून लगाए हैं । जो उचित नहीं

है, जैसे कि एक महिला का कार्य बस घर तक ही सीमित है, वह अपना सारा योगदान बस अपने घर के कामों में देगी अर्थात घर की चारदीवारी से बाहर नहीं निकलेगी । उनका कार्य बस अपने घर-परिवार तक सीमित है। वह अपना योगदान केवल घर के कामों में देती है । इसलिए स्त्री की पहुँच केवल घर की चारदीवारी तक सीमित होकर रह गई।

परंतु प्राचीन काल में स्त्रियों की दशा भिन्न थी । उन्हें समाज में उचित सम्मान प्रदान किया जाता था। उन्हें शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण अधिकारों से वंचित नहीं रखा जाता था। जिस कारण उस समाज में हमें गार्गी, मैत्रेयी जैसी विदुषियों के भी दर्शन होते हैं। कहा जा सकता है कि शिक्षा ही स्त्री के लिए वह हथियार बनी जिसकी बदौलत स्त्री अपनी पुरानी बंदिशें तोड़ कर इस नए मुक्त गगन में बेखौफ उड़ पाती है। आज शिक्षा की बदौलत ही स्त्री की वैयक्तिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक परिस्थितियों में परिवर्तन आ रहा है । इसलिए इक्कीसवीं सदी में स्त्री घर की चारदीवारी से बाहर निकल कर सभी चुनौतियों का डट कर सामना कर रही है। अब स्त्री की परिधि किसी भी मायनों में सीमित नहीं रह गई है। वे समाज के सभी क्षेत्रों में समान रूप से प्रगति कर रही है । आज महिलाओं ने यह सिद्ध कर दिया है कि यदि वे अपने घर की चारदीवारी में रह कर अपना घर चला सकती हैं तो घर की चारदीवारी से बाहर निकल कर अपना घर और व्यवसाय भी भली भांति चला सकती हैं । महिलाओं ने अब हर क्षेत्र में अपनी कला, प्रतिभा आदि गुणों का प्रदर्शन कर दिखाया है। जो बताता है कि महिलाओं की इस उड़ान को रोकना अब असंभव है।

-डॉली
बी.ए. प्रोग्राम (द्वितीय वर्ष)

आज का युग

वर्तमान समय आधुनिकता का दौर है । ऐसे समय में सांस्कृतिक और सामाजिक गतिविधियाँ कम होती जा रही हैं । जिसने हमारे युग के लोगों को सामाजिक-सांस्कृतिक विरासत से दूर करने का काम किया है । आज लोग परस्परिक सहयोग, प्रेम, सरोकारों को भुला कर केवल अपने निजी कार्यों की पूर्ति में लगे रहते हैं। उन्हें बाकी दुनिया से जैसे कोई मतलब ही न रखना हो । उनके जीवन का तात्पर्य केवल अपनी संस्कृति को भुला कर विदेशी संस्कृति में रच बस जाना ही हो। इसलिए ऐसे लोग केवल पश्चिमी संस्कृति का अनुकरण करते देखे जाते हैं । इसी जीवनचर्या और जीवन मूल्यों को वे अपनी आगामी पीढ़ी को देते हैं। इसलिए आज अधिकांश बालक-बालिकाएँ भारतीय संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं। आज इक्कीसवीं सदी में हमें ऐसे प्रयास करने की आवश्यकता है जिससे भारतीय संस्कृति और विरासत को कायम रखा जा सके।

-रिंकी
बी.ए. (प्रोग्राम) प्रथम वर्ष

मीडिया : लोकतंत्र का चौथा स्तंभ

आधुनिक युग में भारत विश्व के अन्य देशों के लिए सशक्त लोकतांत्रिक देश की श्रेणी में आता है। अगर यहाँ लोकतंत्र को मजबूत बनाने वाले आधार स्तंभों की बात करें तो न्यायपालिका, कार्यपालिका,

विधान पालिका और मीडिया इनमें शामिल है। कहा जा सकता है कि मीडिया की भूमिका लोकतंत्र में काफी बढ़ जाती है। क्योंकि जिस तरह साहित्य समाज को मशाल दिखाकर अंधेरे से बाहर लाने का काम करता है। उसी प्रकार मीडिया भी किसी समाज में निहित सत्य को उजागर करने का काम करती है। इसलिए मीडिया को महत्वपूर्ण कारक भी माना जा सकता है। जो जनता के लिए आँख, नाक, कान और आवाज़ बन जाने का भी

काम करती है। लेकिन आधुनिक युग में मीडिया घटनाओं, विज्ञापनों की जानकारी, देश-विदेश की जानकारियों आदि को दूसरों तक पहुँचाने का माध्यम बन रहा है। आज कल हम मीडिया की सहायता से किसी भी जानकारी को आसानी से प्राप्त कर सकते हैं। पहले के समय में मीडिया इतना तीव्र गति से कार्य नहीं करता था। परंतु आज का मीडिया कम से कम समय में अपना कार्य करता है। आधुनिक युग में मास-मीडिया का प्रयोग होता है। जिसका मुख्य उद्देश्य कम समय में ज़्यादा कार्य करना होता है। हमारे जीवन में हम मास-मीडिया के द्वारा अनेक वस्तुओं तथा अनेक स्थान पर उसका उपयोग कर सकते हैं। जैसे हम समाचार पत्र के द्वारा रेडियो के द्वारा, मोबाइल के द्वारा कम समय में किसी भी चीज़ की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। मीडिया हमारे जीवन का ऐसा भाग बन चुका है। जिसके बिना मानव जीवन अधूरा है। हमारे जीवन के प्रत्येक पहलुओं से संचार माध्यम किसी न किसी तरह से जुड़ा होता है। ऐसे में मीडिया की ज़िम्मेदारी काफी बढ़ जाती है। आज इक्कीसवीं सदी में जब भारत विकास के मार्ग पर अग्रसर है। ऐसे में मीडिया का 'फेक न्यूज़' से लेकर 'पेड न्यूज़' तक का सफर काफी दुखद है क्योंकि इसने मीडिया की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न लगा दिया है। आज जब भारत कई तरह के आंतरिक और बाहरी संकटों से घिरा है। ऐसे में मीडिया को भी अपनी तटस्थता, दूरदर्शिता, ईमानदारी व साहस का परिचय देते हुए अपनी भूमिका का भली प्रकार निर्वाह करना चाहिए।

-वरीशा खातून
बी.ए. (प्रोग्राम) प्रथम वर्ष

हिंदी–हमारी पहचान

हिंदी हमारी राष्ट्र भाषा है जो कई युगों की समयावधि को लांघ कर अपने वर्तमान रूप में हमारे समक्ष मौजूद है। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार हिंदी भाषा की संरचना काफी लचीली है इसलिए वह दूसरी भाषाओं के शब्दों को भी सरलता से स्वीकार कर

लेती है। हिंदी ने न केवल मुगल कालीन दौर देखा है बल्कि औपनिवेशिक दौर भी सहन किया है। तत्कालीन समाज में व्याप्त सत्ता संबंध हिंदी को क्षतिग्रस्त न कर सके क्योंकि हिंदी को हानि पहुँचाना भारतवासियों की वाणी को क्षतिग्रस्त करना था। इस बात के प्रति भारतीय जनता जाग्रत थी। इसलिए भारत

में जब 'स्वदेशी अपनाओ' जैसे आंदोलन चल रहे थे उसी दौर में युवाओं ने विश्वविद्यालयों की पढ़ाई छोड़ न केवल मैकाले की शिक्षा नीति का विरोध किया साथी ही भारतीयों पर थोपी जाने वाली अँग्रेजी ज़बान के प्रति भी आवाज़ बुलंद की। हिंदी केवल भाषा नहीं है। बल्कि हमें विरासत में मिली मातृभाषा है जो हमें अपनी विरासत, संस्कृति, परिवेश से जोड़े रखती है। आज वर्तमान समय में एक बार फिर वही दौर आ गया है जब हम धीरे-धीरे अपनी पहचान, भाषा और संस्कृति को भूलते जा रहें है और पुनः विदेशी भाषा और वस्तुओं के प्रति अपनी अंधी आस्था प्रस्तुत कर रहें हैं जोकि सर्वथा निंदनीय है। अगर हम भारतवासी अपनी भाषा और संस्कृति को जीवित रखना चाहते हैं तो हमें निरंतर प्रयास करने चाहिए ताकि हम आने वाली पीढ़ी को वही सौगात दे सकें, जो हमें विरासत में अपने बुज़ुर्गों से मिली है।

-हिमांशी
बी.ए. (प्रोग्राम) प्रथम वर्ष

घर से निकलते ही.....

'घर' एक ऐसा स्थान है जहाँ माँ का प्यार, पिता की डाँट (जिसमें कहीं-कहीं प्यार छिपा है) भाई-बहन के झगड़े से लेकर सब कुछ हमें घर से मिलता है। इसके अतिरिक्त जो हम चाहे और वो हमें न मिल

पाए तो माता-पिता का प्यार ही सभी अभावों की पूर्ति करता रहता है। घर ही ऐसी जगह है जहाँ हमारी चलती है। मेरे घर में ज़्यादातर मेरी ही चलती है क्योंकि वह घर ही होता है जहाँ आप अपने स्वाभाविक रूप में उपस्थित होते हैं। वहाँ कोई नकली चेहरा नहीं होता, जो आपने दुनियाँ के लिए ओढ़ा होता है। वहीं दूसरे स्थान पर घर के बाहर की दुनियाँ

है, जो कि सभी को पता है कैसी है ? वह कभी अच्छी तो कभी बुरी है, मेरे हिसाब से तो ठीक ही है। घर से निकलते ही बिल्कुल भिन्न वातावरण होता है जहाँ अच्छे-बुरे लोग हो सकते हैं जो आपको न समझते हो लेकिन आप उन्हें बहुत कुछ समझते हो। बाहर की दुनियाँ जितनी अभी तक मैंने देखी है शायद वह अभी भी मेरी बहुत छोटी और सीमित दुनियाँ ही है, लेकिन वह काफी चतुर और तेज़ है। मैं ऐसी हूँ कि सभी से बात करने वाली हूँ पर लोगों को लगता है कि बहुत ज़्यादा 'चिपकू' किस्म की लड़की हूँ। कितने बुरे होते हैं लोग पर कभी-कभी अच्छा शख्स भी मिल जाता है। अभी मैंने बाहर की दुनियाँ देखनी शुरू की है, उसे समझा है, जाना है, पहचाना है, उसकी पड़ताल की है, उसको परखा है तब जाकर लगने लगा है कि अभी बहुत कुछ देखना बाकि है, अभी बहुत कुछ सीखना बाकि है। इस दुनियाँ में, इस दुनियाँ के बीच।

-दीक्षा

बी.ए. प्रोग्राम (प्रथम वर्ष)

कन्या प्रश्न

मैंने तो कभी नहीं कहा पापा कि

मुझे चाँद चाहिए।

चाँद क्या मैंने चना भी तो नहीं माँगा,

जो दिया खाया, जो दिया पहना,

क्योंकि वही था मेरा गहना-

यही माँ ने कहा था !

मैंने तो कभी नहीं कहा भैया कि

मुझे चाँद चाहिए !

चाँद क्या ! चाँदी की बाली भी तो नहीं माँगी !

तुम्हारे जैसी कोई भी चीज़ नहीं क्योंकि तुमसे बराबरी नहीं करना

यही माँ ने कहा था !

दूध और फल भी मेरे लिए सपना था

क्योंकि मेरे फलदान के लिए

तिल-तिल जोड़ कर दहेज बनाना

बाबा का सपना था।

ब्याह की बेदी पर बैठा कर

फिर नहीं देखा कि

आग की लपटों में झुलसी

बेटी का सपना क्या था !

कुछ नहीं माँगा, कुछ नहीं चाहा

अनचाहे ही मिल गया बहुत कुछ !

कभी मिला जहर, मिला कभी पानी

किसी कोख के अंधेरे में या

किसी अस्पताल के फ़्लश में !!

और बच कर निकली कभी तो

समंदर की गोद मिली और

जीने की ललक लिए ही

मैं दुनियाँ छोड़ चली !!!

आज मैं पूछती हूँ कुछ प्रश्न - -

अनबुझे, अनकहा पर जलते से - -

यह 'कन्या-प्रश्न' मेरा,

बनेगा अब 'यक्ष-प्रश्न' !!

कोई बता दे मुझे-क्यों हर रोज़

कोई न कोई फूल-सा तन

कुचल दिया जाता है, मसल दिया जाता है ?

क्यों कोई बीजल, कोई बिलकिस

और कोई निर्भया बना दी जाती है ??

संदर्भ:- भ्रूण हत्या, अस्पताल में माँ द्वारा कन्या शिशु को फ़्लश में बहाना, गुजरात में चार बहनों को समुद्र में डूबा देना:- बीजल, जैनगु, बिलकिस, बानो । निर्भया तथा अबोध बालिकाओं से दुष्कर्म ।

-डॉ. राधिका सिंह

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग

(सेवानिवृत्त सदस्य)

उलझन

समस्याओं के घने जंगल में

रास्ता खोजते, अंधकार में भटकते,

अक्सर हमसे वह रास्ता भी छूट जाता है

जहाँ से हमने प्रवेश किया था ।

जिस आशा और विश्वास का सहारा लेकर

समाधान ढूँढ़ने चले थे

वह भी धीरे-धीरे दूर होता

कहीं खो जाता है ।

रह जाता है समस्याओं का बीहड़

उलझे तारों की गुत्थियों की तरह

जिन्हें सुलझाने में ही

जीवन चुकता चला जाता है।।

-डॉ. राधिका सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
(सेवानिवृत्त सदस्य)

मुझे मालूम न था

मुझे मालूम न था कि

देवता के रूप में शैतान बसते हैं;

आस्तीन के साँप बन कर

अपनों को ही डँसते हैं !!

मुझे मालूम न था कि

बुज़दिल, कायर और डरपोक भी

हिम्मत और वीरता का

भरपूर स्वाँग रचते हैं !

रहमदिली, मासूमियत और

दरियादिली की आड़ में

दोस्तों का ही बेरहमी से शिकार करते हैं !

कथनी और करनी के भेद को

समझने में नाकाम मन !

सोचता है कि पूजा के बुत भी

पत्थर ही बने रहते हैं !

-डॉ. राधिका सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
(सेवानिवृत्त सदस्य)

*(गीत)

चंचल लहरों-सी लहराती झरनों के संग बहती हूँ

लय पर बूंदों के नर्तन और हवा से बातें करती हूँ।

कोमल किसलय की छुअन, सिमरन भरती है तन में।

कलियों की मादकता ले, मन झूम-झूम उठता पल में।

सुन कोयल के मधुर गीत, झंकृत होते मन के तार,

मधु गंध मेरे मादक फूलों से सज उठता है सुंदर हार।

सावन के उड़ते बादल जब, छा जाते वन उपवन में,

धरती पर फैली हरियाली सुख भर जाती नयनों में।

रस-रूप मधुर नव भाव लिए, मैं गीत तुम्हारे गाती हूँ

यह चंदन सुरभित हृदय लिए, पास तुम्हारे आती हूँ।

जीवन का सुख हार तुम प्रिय, मेरा कुछ भी कहीं नहीं।

जो कुछ पाया तुम्हें सौंप कर, छिप जाऊँ बस यहीं कहीं

-डॉ. राधिका सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
(सेवानिवृत्त सदस्य)

चुनिंदा मुक्तक

एक आम, अहसास, एक हसीन ख्वाब है दोस्ती,

प्यासे को जो मिल जाए वो तृप्ति है दोस्ती,

एक नगमा, एक फूल, एक जोश है दोस्ती,

गम के अंधेरों में एक चिराग है दोस्ती।

कुछ लेने से पहले, तू देना तो सीख,

हँसने से पहले, जरा रोना तो सीख

जीने का सुख अगर पाना है पगले! तो

प्यार में मरने का तरीका भी सीख

मेरे सपनों को तुम्हारी आँखों ने

न जाने कब चुरा लिया।

मेरी बातों को तुम्हारे लबों ने

न जाने कब सजा लिया

मेरे उन सपनों को पंख तुमने दिए

उड़ चले वे दूर गगन के रंगों में घुल गए

मेरे शब्दों को रूप तुमने ही दिए

मधुर लय-ताल में बंध गीत में वे ढल गए

स्वप्न भरे वे गीत, गीत भरे वे स्वप्न

फिर ना जाने कब मेरे हृदय में समा गए

मुझे ही मालूम नहीं।

मुस्कुराते लब में सिमटी

बात छोटी पर पुरानी

हसरतों की गोद में

अठखेलियाँ करती सुहानी;

झिलमिलाती ओस-सी

मधुमास-सी मीठी कहानी

ढल न जाए आँसुओं में प्यार की झीनी कहानी।

हँसी थिरकती लय से

हर पल को संभाले रखती है

पलकों में छिपी नाजुक लड़ियाँ

मोती को संभाले रहती है;

आँसू और हँसी मिल कर,

इस दिल को संभाले रहती हैं

पर प्यार भरी धड़कन दिल की

जीवन को संभाले रहती है।

-डॉ. राधिका सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
(सेवानिवृत्त सदस्य)

मैं जीना चाहती हूँ

अंकुरण का बीज हूँ,

फूटना चाहती हूँ।

धरा को चीर उगना चाहती हूँ,

चाहती हूँ ताकना निनिर्मेष उसे,

फिर फूल बनकर खिलना चाहती हूँ।

अरमानों के पंख लगाकर

उड़ना चाहती हूँ,

इस सुने फ़लक में कुछ हुड़दंग चाहती हूँ,

चाहती हूँ गगन के उस आखिरी छोर को,

जहाँ फिर से मैं चलना चाहती हूँ,

मैं जीना चाहती हूँ।

आरज़ू इस मिट्टी की है...

इसी से अस्तित्व है मेरा,

इसी से है मेरा अंत।

खेलना चाहती हूँ इस मिट्टी से,

फिर इसी की चादर ओढ़ना चाहती हूँ।

ख़्वाहिश है, कफन मेरा तिरंगा बने,

उसी में लिपट फिर मौन होना चाहती हूँ।

गुजरगाह थी मैं मुकाम पर अपने,

उस अंजुमन से बाहर निकली ही थी,

कि कत्ल कर दी गई मैं,,,,

मेरी आरज़ुओं को जला दिया गया,

दफन कर दी गई मेरी हसरतें

जहाँ मिट्टी भी लाल थी।

वो आफताब उगाने से पहले ही डूब गया,

जिसकी किरणों से उरुज की

राह सजाई थी मैंने।

मैंने फकत जीने की छह रखी थी,

मेरी जिजीविषा ही रौंद दी गई।

रंजिशे बहुत थी खुद से,

अफसोस भी था कुछ टूट जाने का,

पर हारी नहीं थी मैं,

उरुज की उन राहों को,

अपनी आखिरी किरण से जोड़ा था,

फिर शुरू हुई वो दास्तां-ए-मोहब्बत,

जो की थी मैंने अपने ही मुकाम से।

अब एक ही राह थी,

एक ही था अरमान

सर उठाकर जीना था,

रख ज़मीन पर पाँव।

अब खौफ नहीं था किसी का,

न किया था मैंने किसी का गुणगान,

करना मुकम्मल अब हर ख्वाब था,

थामकर अपना स्वाभिमान।

हसरतें लेकर आँखों में,

लिया एक संकल्प ठान,

बनाकर अपना अस्तित्व,

बनूँगी सबकी पहचान,

मुक्कमल करूँगी हर वो ख्वाब,

जो लिया था कुनबे ने पाल,

सिद्ध होगा अब हर वो सपना,

जिसने बदल ली थी अपनी चाल।

जीने की ये ख़्वाहिश अब नहीं मरेगी,

नहीं टूटेगा किसी का ख्वाब,

अमर वो हमेशा रहेंगे,

जो जीतेंगे अपने अक्स का खिताब।

-शिवांगी गुप्ता
बी.ए. (ऑनर्स) हिंदी तृतीय वर्ष

फूल चुन कर एकत्र करने के लिए मत ठहरो। आगे बढ़े चलो, तुम्हारे पथ में फूल निरंतर खिलते रहेंगे। **-रवींद्रनाथ ठाकुर**

सूर्यास्त

किरणें निकली, लाली बिखरी

सांय काल का भेद कराती

हुई गुलाबी बादल की दृष्टि

मौन होने लगी सारी सृष्टि

मानो किसी कलाकार ने

रंग डाली हो सारी बस्ती

कोयल करती कूँ-कूँ

पपीहे की पीहू–पीहू

जग को अपना भान कराती

लौट रहे घर को अपने

गोधूलि की बेला बतलाती

साँझ की शीतलता में जैसे

अंबर पर चमके हो मोती

जैसे मंदिर के शंखनाद में

पावन होती सारी धरती।

-सलोनी

बी.ए. प्रोग्राम (प्रथम वर्ष)

मेरे वतन

ऐ मालिक ऐसा कुछ कर दे।

इस वतन का कफन मेरे नाम कर दे।

हौंसला न हारे हम।

वतन का नाम हम ऊँचा कर दें।

ढेरों हुए वतन पर कुर्बान,

अब मुझको भी शौर्य का बल दे।

गांधी, नेहरू, सुभाष सा संबल दे।

हो तिरंगा मेरा ऊँचा।

ऐसा कुछ कर जाऊँ मैं।

अपने तिरंगे पर न्यौछावर हो जाऊँ मैं।

- आरती

बी.ए. प्रोग्राम (प्रथम वर्ष)

माँ

माँ से शुरू होती दुनियाँ

माँ पर ही समाप्त होती दुनियाँ

जीवन में कितने कष्ट झेलती

सबका करती सामना

न दिखलाती दुखों की चादर

भरती हमेशा खुशी की गागर

माँ से मिला जीवन वरदान

माँ पर दूँ तन-मन-धन वार

माँ का हम करें सम्मान

माँ को न ठुकराए हम

करें ये हम खुद से वादा

माता ही है पहली गुरु

माता ही है सृजनधारा।

-दीपांशी तिवारी

बी.ए. प्रोग्राम (प्रथम वर्ष)

शिक्षा

शिक्षा वह आधार है,

जिसके बिना जीवन बेकार है।

शिक्षा वह अनमोल विचार है,

जिससे जीवन का उद्धार है।

शिक्षा जीवन की वह चाबी है,

जो मानव को मानवता की सीख दे जाती है।

शिक्षा ही वह औज़ार है,

जो मानव को सामाजिकता का देती ज्ञान है।

-आरती

बी.ए. प्रोग्राम (द्वितीय वर्ष)

बेटियाँ

बेटी हूँ मैं बेटी, मैं तारा बनूँगी

तारा बनूँगी मैं सितारा बनूँगी

आकाश में चमके चंदा जैसे

धरती पर मैं चमकूँगी

मैं बेटी हूँ तुम्हारा सहारा बनूँगी

पढ़ूँगी-लिखूँगी बनूँगी महान

अपने पैरों पर होकर खड़ी मैं

रोशन करूँगी तुम्हारा नाम

फूल खिलने से पहले न तोड़ो

मुझे दुनिया में आने से न रोको

मैं दूँगी तुम्हें उचित सम्मान

बेटी हूँ मैं

पढ़-लिख कर बनूँगी तेरी पहचान।

-ललिता

बी.ए. प्रोग्राम (द्वितीय वर्ष)

नारी

सुनो नारियों सुनो

आज हम यह प्रण करें

रुके नहीं झुके नहीं

निडरता से आगे बढ़ें

न सहें पुरुषों का अत्याचार

न बेड़ियों को सहें

बस पंख खोल अपनी

आज़ादी की उड़ान भरें

आओ खत्म करें लिंग-भेद को

खत्म करें असमानता को

बस समानता के साथ खड़े हों

पूरे विश्वास से

सुनो नारियों सुनो

आज हम यह प्रण करें

रुके नहीं झुके नहीं

निडरता से आगे बढ़ें।

-सुमन

बी.ए. प्रोग्राम (द्वितीय वर्ष)

बचपन

कितना नादान था,

हमारा वो बचपन

काश...फिर से लौटा दे,

कोई हमारा... बचपन

कितना प्यारा लगता था वो जीवन

जब था हमारा प्यारा बचपन

जब था दुनिया से बेगानापन

तब था कितना सरल जीवन

कितना प्यारा था हमारा वो बचपन

जब भी धुंधली यादें दिखाता ये बचपन

मेरी आँखें कर जाता है नम

झूठ बोलने पर भी कितने मासूम थे हम

कितना मस्ताना था हमारा वो बचपन

जब थे हम अपने ही मन के सरपंच

कितना सुहाना था हमारा वो बचपन

काश फिर से लौटा दे कोई वो बचपन

कितना प्यारा था वो बचपन

-आयशा अंसारी

बी.ए. प्रोग्राम (द्वितीय वर्ष)

यारियाँ

यारों की यारी का कभी

मोल नहीं किया जा सकता।

यह वो फूल है जिन्हें कभी

फेंका नहीं जा सकता।

यह वो साथ है जो

समय की गहराई के साथ बढ़ता जाता है

दोस्तों को मानो तो खुदा।

न मानो तो मिट्टी

हर गम को अगर बाँट लो

तो वो छू-मंतर हो जाता है।

इनके साथ बिताया हर एक

लम्हा खास है।

ये वो सौगात है जिन्हें

कभी भुलाया नहीं जा सकता।

इसलिए यारियों का कोई खिताब नहीं होता।

यारियों का ईमान यार होता।

-साक्षी जायसवाल

बी.ए. (प्रोग्राम) द्वितीय वर्ष

वक्त

वक्त उड़ता है परिंदे-सा

कभी रुकता नहीं, कभी थमता नहीं

बस उड़ता जाए परिंदे-सा

इसकी अहमियत जो न समझे,

वो बाद है पछताए

इसका कोई मोल नहीं

इसके जैसा कोई और नहीं

कभी रुकता नहीं कभी थकता नहीं

बस उड़ता जाए परिंदे-सा।

कभी रुलाए कभी हँसाए

कभी न है ये डगमगाए

सबको जीवन लक्ष्य दिखाए

कभी रुकता नहीं कभी थकता नहीं

है वक्त का पाबंद ये

बस उड़ता जाए, परिंदे-सा ये

उड़ता जाए परिंदे सा ये।

-आयशा अंसारी

बी.ए. प्रोग्राम (द्वितीय वर्ष)

ज़िंदगी

क्यूँ डरूँ, क्यूँ हटूँ, क्यूँ ना करूँ

जिंदगी हूँ एक कोई श्राप नहीं

हिस्सा हूँ तेरा कोई पाप नहीं

थोड़ा वक्त दे कुछ करके दिखाऊँगी

वरना तेरे लिए वाजिब मैं कल भी थी

और कल फिर रह जाऊँगी

-तपस्या

बी. कॉम प्रोग्राम (द्वितीय वर्ष)

बचपन

हम बच्चे उन्मुक्त गगन के

फिर क्यों हैं पिंजरे में बंद

बचपन की कोमल भावनाएँ

कहाँ हो गई हैं गुम।

छोटे-छोटे से नन्हें हाथों में

पढ़ाई की किताबों का वज़न

जिन हाथों में खिलौनों की

कोमलता वह कहाँ हो गई दफन।

यूँ तो बचपन होता प्यारा

पर आज इस युग में कहाँ होता हमारा

बस किताबों में बीतता

बचपन हमारा।

छोटी-छोटी ख़्वाहिशों पर क्यों होती हैं बंदिशें

क्यों नहीं समझते हैं कि

इन छोटी-छोटी ख़्वाहिशों में बचपन की

ये आशाएँ कितनी प्यारी हैं।

ये बचपन है प्यारा-न्यारा

इस पर है हमारा हक

क्योंकि है ये....

सिर्फ हमारा बचपन ।

-ज्योति

बी.ए. (प्रोग्राम) द्वितीय वर्ष

माँ

हमारे हर मर्ज़ की दवा होती है माँ...

कभी डाँटती है तो कभी गले लगा लेती है माँ .....

हमारी आँखों के आँसू खुद पी जाती माँ

अपने होठों की हँसी हम पर लुटा देती है माँ

हमारी खुशियों में हो शामिल अपने गम भुला देती माँ

दुनियाँ की तपिश में शीतलता देती माँ

हमें देखकर भुला देती है सारी थकान

रिश्तों को खूबसूरती से निभाना सिखाती है माँ

लफ्जों में जिसे ब्याँ न किया जा सकें ऐसी होती है माँ

-

प्रतिमा

बी.ए. (द्वितीय वर्ष)

जिस साहित्य से हमारी सुरुचि न जागे, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति न मिले, हममें गति और शक्ति न पैदा हो, हमारा सौंदर्य प्रेम न जागृत हो, जो हममें संकल्प और कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करने की सच्ची दृढ़ता न उत्पन्न करे, वह हमारे लिए बेकार है। वह साहित्य कहलाने का अधिकारी नहीं है। **-प्रेमचंद**

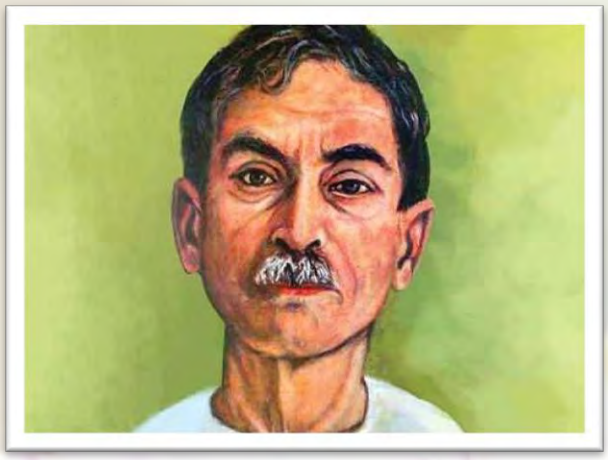

प्रेमचंद कैसे बने मुंशी प्रेमचंद ?

प्रेमचंद के मुंशी प्रेमचंद बनने की कहानी बड़ी दिलचस्प है। हुआ यूँ कि मशहूर विद्वान और राजनेता कन्हैया लाल माणिकलाल मुंशी ने महात्मा गांधी की प्रेरणा से प्रेमचंद के साथ मिलकर सन् 1930 में 'हंस' नामक पत्रिका निकाली। पत्रिका का संपादन के.एल. मुंशी और प्रेमचंद दोनों ने मिलकर किया। तब तक के.एल.मुंशी देश की बड़ी हस्ती बन चुके थे। वे कई विषयों के ज्ञाता होने के साथ मशहूर वकील भी थे। उन्होंने अँग्रेजी और हिंदी दोनों में काफी लेखन किया।

मुंशी जी उस समाय कॉंग्रेस पार्टी के बड़े नेता के तौर पर स्थापित हो चुके थे। वे उम्र में भी प्रेमचंद से करीब सात साल बड़े थे। बताया जाता है कि ऐसे में मुंशी जी की वरिष्ठता का ख्याल रखते हुए तय किया गया कि पत्रिका में उनका नाम प्रेमचंद से पहले लिखा जाएगा। और इस तरह हंस पत्रिका के कवर पृष्ठ पर संपादक के रूप में 'मुंशी प्रेमचंद' का नाम जाने लगा।

संपदा को जोड़-जोड़ कर रखने वाले को भला क्या पता कि दान में कितनी मिठास है।

-आचार्य श्रीराम शर्मा

*** जन्मशती वर्ष**

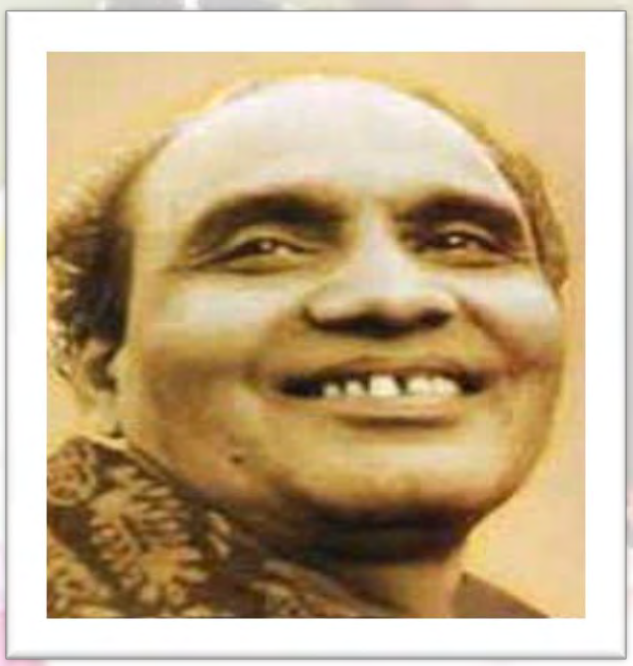

गिरिजा कुमार माथुर की जन्मशती पर उनका स्मरण

गिरिजा कुमार माथुर तार सप्तक के महत्वपूर्ण कवियों में से एक हैं। जिनका जन्म ग्वालियर के अशोक नगर कस्बे में हुआ था। वे कवि, नाटककार और समालोचक के रूप में जाने जाते हैं। गिरिजा कुमार की काव्य-यात्रा ब्रज भाषा में सवैया लेखन से प्रारंभ हुई। उन्होंने अपने प्रथम काव्य संग्रह की भूमिका निराला से लिखवाई। आपको "मैं वक्त के सामने" के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। आपकी कविता 'हिंदी जन की बोली है...' आपके हिंदी प्रेम की परिचायक है। जो इस प्रकार है :-

एक डोर में सबको जो है बाँधती
वह हिंदी है,
हर भाषा को सगी बहन जो मानती
वह हिंदी है।
भरी-पूरी हों सभी बोलियाँ
यही कामना हिंदी है,
गहरी हो पहचान आपसी
यही साधना हिंदी है,
सौत विदेशी रहे न रानी
यही भावना हिंदी है।

तत्सम, तद्भव, देश विदेशी
सब रंगों को अपनाती,
जैसे आप बोलना चाहें
वही मधुर, वह मन भाती,
नए अर्थ के रूप धरती
हर प्रदेश की माटी पर,
'खाली-पीली-बोम-मारती'
बंबई की चौपाटी पर,
चौरंगी से चली नवेली
प्रीति-पियासी हिंदी है,
बहुत-बहुत तुम हमको लगती
'भालो-बाशी', हिंदी है।

उच्च वर्ग की प्रिय अंग्रेज़ी
हिंदी जन की बोली है,
वर्ग-भेद को ख़त्म करेगी
हिंदी वह हमजोली है,
सागर में मिलती धाराएँ
हिंदी सबकी संगम है,
शब्द, नाद, लिपि से भी आगे
एक भरोसा अनुपम है,
गंगा कावेरी की धारा
साथ मिलाती हिंदी है,
पूरब-पश्चिम/ कमल-पंखुरी
सेतु बनाती हिंदी है।

-गिरिजा कुमार माथुर

✸ **(स्मृति-शेष)**

यादों के झरोखे से

आज आप सभी को मैं अपने जीवन में घटित होने वाली एक सच्ची घटना से अवगत करवाना चाहूँगी। जो कि वास्तव में मेरे साथ घटित हुई। इस घटना से आप लोगों में ज़रूर आत्मविश्वास जागेगा । आपको विपरीत परिस्थितियों में धैर्य, साहस और विवेक पूर्वक, संयमित आचरण की सीख मिलेगी। एक बार मैं अपने पिता के साथ दिल्ली अपनी आगामी शिक्षा हेतु आ रही थी। ट्रेन में मेरे पिता मेरे साथ ही थे। ट्रेन काफी रफ्तार से चल रही थी। उसी दौरान मैंने और पिताजी ने खाना खाया, क्योंकि गर्मी काफी थी । इसलिए मुझे बहुत प्यास लग रही थी। मैं बार-बार पानी पीती। लेकिन प्यास न बुझती....बार-बार पानी पीने की वजह से बोतल का पानी खत्म हो गया। और पिताजी को पानी लेने के लिए रेलवे स्टेशन उतरना पड़ा। ट्रेन निहालगढ़ स्टेशन पर थी। मेरे पिताजी ने कहा कि "बेटा तुम ट्रेन में

ही रुको, मैं अभी पानी लेकर आता हूँ।" मैंने उनसे कहा ठीक है पिताजी। आप जाइए, मैं आपका यही इंतज़ार करती हूँ। पिताजी मुझे ट्रेन में छोड़ कर पानी लेने चले गए। कुछ ही मिनट में ट्रेन चल पड़ी। मुझे लगा कि पिताजी कुशल पूर्वक ट्रेन में चढ़ गए होंगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। मेरे साथ बैठे एक यात्री ने मुझे बताया कि आपके पिताजी तो स्टेशन पर छूट गए। सबसे हैरानी की बात यह थी कि मुझे किसी भी यात्री पर विश्वास नहीं हो रहा था। जबकि सभी मुझे कह रहे थे कि मेरे पिताजी स्टेशन पर रह गए हैं। मैं अपने जीवन में ऐसे किसी क्षण की कल्पना भी नहीं कर सकती थी, जिसमें मेरे पिताजी मुझे बीच यात्रा में छोड़ चले जाएँगे। मैंने उसी क्षण खुद को संबल दिया और सहयात्रियों को डाँटा और बोला कि "आप सभी झूठ बोल रहें हैं। मुझे दिखाई नहीं देता इस कारण आप सब मेरा मज़ाक उड़ते हो। आप सब मुझे सताते हो। आपको क्या अधिकार है ऐसा करने का।" कुदरत ने मेरे साथ कुछ अद्भुत ही किया था। इसलिए मुझमें आत्मविश्वास और साहस दूसरों से अधिक ही था। उस क्षण मैंने खुद को बिलकुल भी कमजोर न पड़ने दिया। न मैं विचलित हुई...न ही रोई। लेकिन मैंने निश्चय किया कि मैं अकेले ही यात्रा करूँगी। और मैं अकेले ही दिल्ली पहुँची। वहाँ स्टेशन पहुँचकर मैंने पिताजी का स्टेशन मास्टर के कक्ष में इंतज़ार किया। और मेरे पिताजी मुझे वहाँ ढूंढते हुए पहुँच गए।

इस यात्रा ने मेरे जीवन पर काफी गहरा प्रभाव डाला। और मुझे जीवन भर के लिए सीख दी कि कभी भी विषम परिस्थितियों में घबराना नहीं चाहिए। जीवन में कोई भी परिस्थिति इतनी बड़ी नहीं हो सकती कि वह किसी व्यक्ति के विवेक पर हावी हो जाए। इसलिए मानव को जीवन में प्रयत्न करते रहना चाहिए। क्योंकि यही प्रयत्न और अनुभव उसे आगामी जीवन की कठिनाइयों, परेशानियों और संघर्ष के लिए तैयार कर सकते हैं।

-मुन्नी
बी.ए. प्रोग्राम (प्रथम वर्ष)

*** (किस्सा)**

बूढ़ी मौसी

एक गाँव में एक बूढ़ी महिला रहती थी। उनका कोई भी सगा-संबंधी न था। उनके बाल-बच्चे भी न थे। और उनके पति व अन्य परिवार वालों की एक हादसे में मृत्यु हो गई। वह अपने घर में अकेली बच गई थी। उनकी उम्र ज़्यादा होने के कारण वह घर के सारे काम अकेले नहीं कर पाती थी। जब वह बीमार होती थी तो उन्हें बहुत समस्या होती थी। लेकिन गाँव के लोग उनकी बहुत सहायता करते थे। उन्हें अपने घर पर खाना खिलाते और कभी-कभी उनके घर पर जाकर खाना बना दिया करते और उनकी बहुत मदद करते थे।

वो अकेली रहती हैं परंतु कभी भी उन्हें यह महसूस नहीं हुआ कि वह अकेले रहती हैं या

उनके परिवार में कोई नहीं है। गाँव का कोई न कोई व्यक्ति उनके साथ हमेशा रहता था। उनकी मदद के लिए सहायता करने के लिए। गाँव के सभी लोग उनका बहुत आदर व सम्मान करते थे। लोग किसी महत्वपूर्ण काम को करने के लिए उनसे सलाह भी लेते थे। वो भी गाँव वालों से बहुत प्रेम करती थीं। वह गाँव वालों को त्योहार पर कोई न कोई तोहफा दिया करती थीं। एक दिन वे अकेले मंदिर में अकेले पूजा करने गईं और मंदिर पहुँचने के बाद पूजा की। मंदिर के साथ एक कुआँ था। वह उधर से जा रही थीं कि अचानक चक्कर आने के कारण पैर फिसल गया और उनकी मृत्यु हो गई है। पूरे गाँव में मातम छा गया जैसे किसी परिवार का सदस्य चला जाता है तो जो दुख होता है वहीं दुख इन गाँव वालों के मन में था। हल्की-हल्की बूँदा-बांदी हो रही थी मानो उनके जाने से पूरा आसमान रो रहा है।

-सपना मिश्रा
बी.ए. प्रोग्राम (द्वितीय वर्ष)

विरासत

इलाहबाद में एक नदी के घाट के पास एक मछुआरा रहता था वह बहुत गरीब था। उसके परिवार में पाँच सदस्य थे। उसके दो बेटे एक बेटी और उसकी पत्नी। एक दिन मछुआरा मछली पकड़ने गया और वे वहीं पानी में गिर गया फिर घाट के आस-पास के लोगों ने उस मछुआरे को बाहर निकाला। लोगों ने उस मछुआरे से उसका नाम पूछा। मछुआरे ने अपना नाम विजय बताया। विजय जब घर पहुँचा तब वह उस घटना के बारे में अपने परिवार को बताता है। उसकी बेटी रोने लगती है और कहती है कि पिता जी आप कल से घाट पर नहीं जाएँगे, यदि आप जाएँगे तो मैं भी आपके साथ चलूँगी। अगले दिन विजय फिर घाट पर जाता है। उसकी बेटी देख लेती है और वो भी अपने पिता के साथ जाती है। फिर दोनों मिल कर काम करने लगते हैं। विजय अपनी पुत्री को देख कर खुश होता है कि मेरी बेटी मेरे साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही है। यही देखकर

विजय के पुत्र भी अपने पिताजी के साथ काम करने लगे। पिताजी ये देखकर फुले नहीं समा रहे थे कि मेरे बच्चे बड़े हो रहे हैं। धीरे-धीरे मछुआरे की आर्थिक स्थिति में भी सुधार हो रहा था। फिर विजय अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए शहर ले जाता है। जब मछुआरा शहर गया तो वहाँ की दुनिया उसके लिए नई दुनिया थी। वह गाँव से आए थे। उसके लिए शहरी दुनिया बिलकुल अलग थी। धीरे-धीरे वह शहरी माहौल में ढलने लगे। लेकिन गाँव की सादगी, संस्कृति, सौहार्द को उसने कभी खुद से अलग न किया। ये विरासत ताउम्र बुज़ुर्गों के आशीर्वाद की तरह विजय के साथ रही।

-नेहा

बी.ए. (प्रोग्राम) प्रथम वर्ष

* राष्ट्र की एकता को अगर बनाकर रखा जा सकता है तो उसका माध्यम हिंदी ही हो सकती है। **-सुब्रह्मण्यम भारती**

* अत्याचार और अनाचार को सिर झुकाकर वे ही सहन करते हैं जिनमें नैतिकता और चरित्र का अभाव होता है।

-कमलापति त्रिपाठी

* नारी की करुणा अंतरजगत का उच्चतम विकास है, जिसके बल पर समस्त सदाचार ठहरे हुए हैं।

-जयशंकर प्रसाद

***(पगडंडियाँ)**

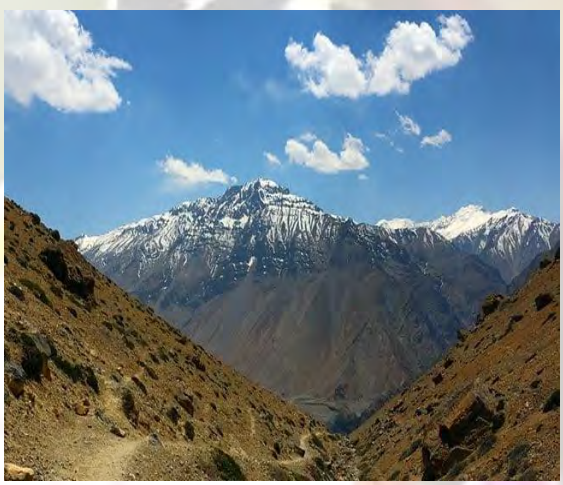

मेरी हिमाचल यात्रा

मेरी पहली यात्रा हिमाचल प्रदेश से हरिद्वार की थी। जिसमें मैंने काफी समय अपने परिवार के साथ गुज़ारा। इस यात्रा में मेरे साथ मेरा पूरा परिवार था जैसे:- मैं, मम्मी, पापा, दो छोटी बहन और भाई। यह यात्रा मेरे लिए काफी महत्वपूर्ण थी क्योंकि इस यात्रा ने मुझे दिल्ली के कंक्रीट के जंगल से निकाल कर प्रकृति के समक्ष ले जाने का काम किया। इसलिए इस यात्रा में गुज़रा हर पल मेरे मन में अब तक ज्यों का त्यों बसा हुआ है। यह यात्रा मैंने छुट्टियों के दौरान की थी। जिसके लिए मेरे पापा ने दो ट्यूरिस्ट कार बुक की। उस ट्यूरिस्ट एजेंसी के मालिक मेरे पापा के काफी अच्छे दोस्त थे। तो हमें पर्यटन से संबंधित कोई परेशानी नहीं हुई। हमने 20 जून 2018 से 25 जून 2018 तक की अवधि चुनी। हम लोगों ने 19 जून की रात में पैकिंग करना शुरू किया और 20 जून को वह दिन आ गया। जिसका हमें बेसब्री से इंतज़ार था। सुबह हमारी कैब घर आ गई। हमने

अपना सारा सामान सीट पर रखा और अपनी-अपनी सीटों पर जा बैठे। हम लोगों ने परिवार के बुज़ुर्गों से आशीर्वाद लिया और अपनी यात्रा पर चल पड़े। हमारी कैब ठीक 9 बजे निकल गई। रास्ते भर मैं शांत बैठी प्रकृति के मनोहारी दृश्यों को देख रही थी। कभी-कभी रास्ते में जाम लगते, कई बार बड़ी-बड़ी दुकानें, शो-रूम दिखाई पड़ते। हम कैब में बैठ कभी गाते कभी मज़ाक करते। हमने पूरा दिन कुछ इसी तरह बिताया। रात के दो बजे हमने चाय पी। मेरे लिए यह अनुभव काफी नया था। मैंने इससे पहले कभी भी देर रात को घर से बाहर चाय नहीं पी थी। मैं चाय की चुस्कीयों के साथ अपने चारों ओर फैले सन्नाटे और शांति को भी महसूस कर रही थी। थोड़ी देर आराम करके हम अपनी यात्रा पर निकल चले। हम पहाड़ों के काफी नजदीक पहुँच चुके थे। अब पहले की तरह सीधे-सीधे रास्ते न थे। बल्कि वो घुमावदार होते जा रहे थे। पहले तो मुझे इन रास्तों और पहाड़ों को देखकर डर ही लग रहा था। लेकिन बाद में ये पहाड़, सीढ़ीनुमा खेत और उन पर बने पारंपरिक घर मन मोहने लगे। रात में पहाड़ पर बने घर और उनका प्रकाश दीपों की कतार से आकर्षक और उज्ज्वल प्रतीत होते। मैंने यात्रा के दौरान रात को गुजरते और सूर्य को निकलते देखा। यह दोनों दृश्य अलग-अलग बेला और रंगों को अभिव्यक्त करते हैं। लेकिन पहाड़ों में प्रकृति के इन दोनों दृश्यों की सुंदरता काफी बढ़ जाती है। ऐसे में सुबह की शांत, स्वच्छ, स्वछंद हवा में पक्षियों की मधुर आवाज़ें संगीत-सी प्रतीत हो रही थी। मुझे तो यकीन ही नहीं हो रहा था कि मैं हिमाचल में हूँ। हम सबने कई स्थानों पर रुक-रुक के फोटोग्राफी की। ज्यों कि सुबह का समय था और हम सबको ज़ोरों से भूख लगी थी। हम सब कैब में बैठे और एक ढाबे पर जा पहुँचे। जहाँ हमने चाय व नाश्ता लिया। फिर हम कुफरी की तरफ रवाना हुए। वहाँ मेरे पापा ने होटल में रूम बुक किया हुआ था। जहाँ हम सभी ने आराम किया। फिर हम कुफरी के प्रसिद्ध मंदिरों के दर्शन के लिए गए। जहाँ सभी यात्री घोड़ों पर सवार होकर जाया करते थे। घोड़ों की सवारी के दौरान हिमाचल की मन मोहक घाटियाँ और भी आकर्षक लग रही थीं। हम सब कुफरी के लगभग सभी प्राचीन व प्रसिद्ध मंदिरों के दर्शन किए। वहाँ फोटो खिचवाई। इनके अतिरिक्त हमने हिमाचल के लोक संगीत और गीतों का लुफ्त उठाया, उन पर झूम-झूम के नाचे। जिसने इस यात्रा को ओर भी मज़ेदार बना दिया।

-हिमांशी

बी.ए. प्रोग्राम (प्रथम वर्ष)

✸ रेडियो वार्ता

रेडियो डायरी से प्रस्तुत है रेडियो वार्ता

रेडियो वार्ता एक ऐसी विधा है जिसमें वार्ता यानी बातचीत की शैली में विषय का प्रस्तुतिकरण किया जाता है। यहाँ इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि चुने हुए विषय को इस प्रकार से प्रस्तुत किया जाए कि श्रोता को उसकी पूरी जानकारी भी हो जाए, विषय नीरस भी न रहे और श्रोता उसमें इतना भाव-निमग्न हो जाए कि वह वार्ता से संबद्ध मूल कृति

को पढ़ने के लिए श्रोता से पाठक बनने के लिए आतुर हो जाए। किंतु यह तभी संभव होगा जबकि वार्ताकार नीरस से नीरस विषय को भी जनभाषा के सरस उद्गारों में व्यक्त करने में सक्षम हो। साथ ही गागर में सागर भरने की कला भी उसे आती हो। यही कारण है कि समयबद्धता भी इस विधा का महत्वपूर्ण अंग है। यहाँ प्रस्तुत है दस मिनट की एक वार्ता जिसका शीर्षक है-

आल्हा खंड का काव्य सौंदर्य

बारह बरिस लौ कूकर जीएं, और तेरह लौ जिएं सियार

बरिस अठारह छत्री जिएं, आगे जीवन को धिक्कार

वीरता के उद्गारों से भरी ये पंक्तियाँ परमाल रासो की हैं, जिसके रचनाकार हैं कालिंजर के राजा परमार के आश्रय में रहने वाले आदिकाल के कवि जगनिक। परमाल रासो में कवि जगनिक ने महोबा के दो प्रसिद्ध वीरों आल्हा और उदल के वीरचरित का विस्तृत वर्णन किया है। जगनिक के प्रामाणिक काव्य का आज कहीं अता-पता नहीं है, पर उसके आधार पर प्रचलित गीत हिंदी भाषा-भाषी प्रांतों के गाँव-गाँव में सुनाई देते हैं।

बुंदेलखंड की बोली में रचित आल्हा ओज, उत्साह और वीरता के ऐसे उद्गारों से भरा हुआ है, कि आज भी इसे सुनकर शिरायें फड़कने लग जाती हैं। आल्हा खंड की लोकप्रियता का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि इतनी शताब्दियाँ बीत जाने के बाद भी उत्तर भारत विशेषकर बुंदेलखंड में बहुत ही उत्साह के साथ ओजस्वी शैली में इसका गायन किया जाता है। लोकप्रियता की दृष्टि से तुलसीदास कृत रामचरित मानस के बाद आल्हा का ही नाम आता है। इस काव्य में 52 लड़ाइयों का वर्णन है। इन लड़ाइयों के वीर योद्धा आल्हा और उदल लोकजीवन में अपनी वीरता के लिए इतने लोकप्रिय हैं कि उनका व्यक्तित्व अतिमानवीय बन गया है किंतु वीरकाव्य रचनाओं में अतिमानवीयता या अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन कोई नई बात नहीं है बल्कि इससे काव्य में सही अर्थों में वीर रस की उत्पत्ति होती है और काव्य में चमत्कार पैदा होता है। अतः यहाँ भी अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन खटकता नहीं है बल्कि रस का संचार करता है। इस संबंध में वीर रस और ओज गुण से ओतप्रोत आल्हा की यह पंक्ति द्रष्टव्य है-

खट् खट् खट् खट् तेगा बाजै बोल छपक छपक तरवार

एक कौ मारैं दुई मर जाए, तीजौ ख़ौफ खात मरजाय

उत्साह और ओज से भरे ये उद्गार मन को और अधिक जोश से भर देते हैं। इसीलिए कहते हैं कि जब सावन में बादलों की गर्जन और झमक-झमक बारिश होती है तब आल्हा जमता है और अल्हैत झूम-झूमकर गाते हैं-

भरी दुपहरी सरवन गाइये, सोरठ गाइये आधी रात

आल्हा पवाड़ा वादिन गाइये, जा दिन झड़ी लगे दिन रात

और अल्हैत ही क्यों हर घर में आल्हा खंड का कोई न कोई गायक अवश्य ही मिल जाएगा, जो अपनी उसी परंपरागत शैली में आल्हा खंड का गायन करता हो।

कविता जब मौखिक परंपरा से होती हुई, शताब्दियों को लांघती हुई किसी समाज का स्वर बन जाती है, तब वह भाषा का मुहावरा बन जाती है। इस प्रकार वह एक पूरी संस्कृति का रूप धारण कर लेती है और ऐसी कविता ही असल में लोक कविता कहलाती है। आल्हा खंड असल में लोक काव्य ही है। लोक के लिए रची गई इस रचना की संरक्षा में विद्वानों और पंडितों का कोई योगदान नहीं है। किसी का योगदान है तो केवल लोक का। तभी तो आदिकाल से बहती हुई इस काव्यधारा के वीरतापरक उद्गारों में कोई अंतर नहीं आया है। वही पुरातन प्रतिध्वनि अपनी उसी पुरानी लय में आज भी सावन के अवसर पर बादलों के मंद्रित स्वर के साथ लोकध्वनि में अनुगूंजित होती है और क्या बच्चे, क्या बालक और क्या बुज़ुर्ग सभी उस परंपरागत लय में बद्ध वीरोक्तियों पर झूम उठते हैं।

लोक में आल्हा के नाम से प्रचलित आल्हा खंड असल में मध्ययुगीन सामंती शौर्य का रोमांस काव्य है, जिसमें प्रेम और युद्ध के अनेक गाथाचक्र घटनासूत्र में जुड़े हुए हैं। इसमें नैनागढ़ की लड़ाई सबसे रोचक और लोकप्रिय है तथा सोना के हरण की कथा सबसे प्रसिद्ध है। यों तो इसके नाम से आल्हा के ही कथानायक होने का आभास होता है, परंतु इस काव्य का सबसे आकर्षक पक्ष वीर उदल का है, जो आल्हा का छोटा भाई है। बड़े भाई आल्हा का चरित्र महाभारत के युधिष्ठिर की तरह ही मर्यादापूर्ण है जबकि छोटे भाई उदल के चरित्र में अर्जुन के समान एक रोमांस काव्य के चरितनायक के गुण अधिक हैं। संपूर्ण आल्हाखंड में किसी एक वीर की वीरता इतनी प्रधान नहीं है जितनी कि उनके वंश बनाफर की वीरता। यही कारण है कि यह काव्य अन्य राजप्रशस्तियों से भिन्न है और इसकी अत्यधिक लोकप्रियता का कारण भी संभवतः यही है कि इसमें किसी राजा का गुणगान न करके साधारण परिवार में उत्पन्न होने वाले लोकवीरों का चरित गाया गया है। लोक में वीरता का भाव ज़बर्दस्त ढंग से प्रभावित करता है। जैसे युद्ध में पीठ दिखाकर भागना जितना बुरा माना गया है, युद्ध में प्राण गंवा देना उतना ही श्रेष्ठ माना गया है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

भागि न जैयो कोउ मोहरा ते, यारों रखियो धर्म हमार

खटिया परिके जौ मरि जैहौ, बुढ़िहै सात साख को नाम

रन मा मरिके जौ मरि जैहो, होइहै जुगन-जुगन लौं नाम

यानी युगों तक नाम करना है तो युद्ध में प्राण गंवाना ज़रूरी है क्योंकि वीरों के लिए वीरता का एकमात्र प्रमाण-पत्र यही है।

बुंदेलखंड की इस वीर संस्कृति में अपने शत्रु से बदला लेना बहुत अहम माना गया है। आल्हा में तो ऐसे जीवन को ही धिक्कार दिया गया है, जिसमें जीवित रहते अपने शत्रुओं को परास्त न किया गया हो। एक स्थान पर कहा गया है-

जिनके बैरी सन्मुख बैठे, तिनके जीवन कौ धिक्कार

इसी प्रकार अपशब्द सुनना भी बुंदेलखंडी संस्कृति में नहीं है क्योंकि बुंदेली लोक समाज का अक्खड़ स्वभाव उसका मुहावरा ही बन गया है। एक स्थल पर कवि कहता है-

कड़वा पानी है महोबे का हमसैं बोल सहे ना जांए

इसीलिए शत्रु के कड़वे वचनों की तीसरी आवृत्ति सुनने की क्षमता यहाँ के वीरों में नहीं है :-

पैली गारी पै ना बोलें, ना दूजी पै करैं बिगार

तीजी गारी पै न छोरें, मुख में ठौंस देय तरवार

आल्हा में मूल स्वर और मूल भाव वीरता का अवश्य है किंतु जीवन और व्यवहारगत विभिन्न आदर्शों को भी इस काव्य में अनुस्यूत किया गया है। जैसे अपने स्वामी और मित्र के लिए कुर्बान हो जाना कोई बड़ी बात नहीं है।

जहाँ पसीना गिरै तुम्हारा तंह दैदेउ रक्त की धार

इसी प्रकार आज्ञाकारिता और बड़े भाई का सम्मान भी यहाँ कई जगह बखाना गया है। एक प्रसंग के अनुसार जब उदल के साथ मेले में गए आल्हा के पुत्र इंदल का अपहरण हो जाता है तो आल्हा क्रोध से आगबबूला हो जाते है और बाँस से अपने छोटे भाई उदल को मारने लग जाते हैं-

हरे बांस आल्हा मंगवाए और उदल को मारन लाग

उदल बिना किसी प्रतिरोध के चुपचाप मार खाते हैं। कोई प्रतिरोध नहीं करते बल्कि प्रतिरोध का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि बुंदेली संस्कृति में बड़ा भाई और पिता दोनों का बराबर स्थान होता है। इसलिए उदल तो मार खाते रहते हैं, कुछ नहीं कहते पर आल्हा की पत्नी से ये सहन नहीं होता और अपने पुत्र की परवाह न कर अपने लाडले देवर के लिए वो अपने पति से कहती है-

हम तुम रहिबे जौ दुनिया में, इंदल फेरि मिलेंगे आय

कोख को भाई तुम मारत हौ ऐसी तुम्हहिं मुनासिब नाय

अर्थात भाभी माँ के समान होती है, वह भला अपने पुत्र समान देवर पर आघात कैसे बर्दाश्त कर सकती है। यह बुंदेली संस्कृति है और इसी बुंदेली संस्कृति का मूल भाव आल्हा में झाँकता है। यही कारण है कि आल्हा को बुंदेली संस्कृति से अलगाकर समझा ही नहीं जा सकता। आल्हा से जुड़कर बुंदेली भी ओज की भाषा में परिवर्तित होती नज़र आती है और आल्हा बुंदेली के माध्यम से अपने प्रचलित अन्य रूपों की तुलना में कहीं अधिक प्रभावी बन पड़ा है। इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि बुंदेली में जितना भी साहित्य रचा गया है आल्हा उसमें श्रेष्ठतम है। कारण लोक की व्याप्ति ने उसे किसी भी अन्य रचना से कहीं अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है। जिस प्रकार लोक संस्कृति में समय के प्रवाह के साथ बहुत कुछ छूटता और जुड़ता चला जाता है, उसी प्रकार आल्हा के कलेवर में भी बहुत परिवर्तन देखने को मिलता है। या यूँ भी कह सकते हैं कि लोककाव्य होने के कारण आल्हाखंड के विविध रूपांतर मिलते हैं। बुंदेली के अतिरिक्त खड़ी बोली, कन्नौजी, बैसवाड़ी, अवधी, भोजपुरी के साथ मगही आल्हाखंड के पाठ भी महत्वपूर्ण हैं। बोली के भेद के अलावा इनमें कथाखंडों का भी यत्र-तत्र अंतर मिलता है। इसके अतिरिक्त आल्हाखंड के कुछ प्राचीन हस्तलिखित

रूपांतर भी मिलते हैं । जिनमें एक है- 1925 में लिपिबद्ध महोबा समय और दूसरा 1849 में लिपिबद्ध महोबाकांड । किंतु ये दोनों ही रूप लोकप्रचलित आल्हाखंड के साहित्यिक रूपांतर हैं और आकार में भी लोक में प्रचलित रूपों की तुलना में कहीं अधिक छोटे हैं। यहाँ यह भी कहा जा सकता है कि आल्हा खंड की परंपरा दो रूपों में आगे बढ़ी है। एक ओर इसका विकास अल्हैतों द्वारा मौखिक परंपरा के रूप में होता रहा तो दूसरी ओर चारणों और भाटों द्वारा भी इसका विकास होता रहा और इस प्रकार इसका लिखित रूप भी पारंपरिक रूप से रूपांतरित होता रहा । किंतु एक मूल बात जो आल्हा के सभी पाठों में समान है और समान रूप से महत्वपूर्ण भी है, वह है इस काव्य की लोकस्वीकृति और लोक संस्कार। इन्हीं गुणों ने इस काव्य को अबतक जीवित रखा है। यही कारण है कि वीरछंद या आल्हाछंद में निबंध यह लोककाव्य सच्चे अर्थों में जनसांस्कृतिक काव्य है।

डॉ विभा नायक

* मुट्ठी भर संकल्पवान लोग जिनकी अपने लक्ष्य में दृढ़ आस्था है, इतिहास की धारा को बदल सकते हैं।

-महात्मा गांधी

* यह सच है कि कवि सौंदर्य को देखता है। जो केवल बाहरी सौंदर्य को देखता है वह कवि है, पर जो मनुष्य के मन के सौंदर्य का वर्णन करता है वह महाकवि है।

-रामनरेश त्रिपाठी

रिपोर्ट

साहित्यिक गतिविधियाँ

श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय के हिंदी विभाग (सत्र 2018-19) में विभिन्न साहित्यिक गतिविधियों का आयोजन किया गया । सर्वप्रथम, नई छात्राओं के लिए ओरिएंटेशन कार्यक्रम का आयोजन 20 जुलाई 2018 को किया गया । इसी शृंखला में नवागंतुक स्वागत समारोह का आयोजन 24 अगस्त 2018 को कॉलेज के ऑडिटोरियम में किया गया । कार्यक्रम की थीम सपने था । कार्यक्रम में छात्राओं ने रंगारंग प्रस्तुतियाँ दी जैसे:-रैंप वॉक, टैलेंट राउंड और भरतनाट्यम आदि । इस कार्यक्रम में मिस फ्रेशर ज़ीनत रहीं । इसके अतिरिक्त हिंदी विभाग की छात्राओं ने 'अंधेर नगरी' नामक नाटक का मंचन भी किया । इसी अवसर पर विभागीय प्रथम ई-पत्रिका सुगंधिका का विमोचन भी किया गया । हिंदी विभाग में अगला कार्यक्रम 19 सितंबर 2018 को 'हिंदी का वैश्विक विस्तार और चुनौतियाँ' विषय पर आयोजित हुआ । कार्यक्रम में बीज वक्तव्य हेतु वरिष्ठ भाषाविद् विमलेश कांति वर्मा एवं हिंदी की प्रख्यात लेखिका डॉ. क्षमा शर्मा को आमंत्रित किया गया । जिन्होंने हिंदी की दशा और दिशा, वैश्विक परिस्थिति पर बात करते हुए हिंदी को रोजगार की भाषा बनाने पर ज़ोर दिया । इसी शृंखला में तीसरा कार्यक्रम कवि से मुलाक़ात 10 अक्तूबर 2018 को आयोजित किया गया । इस कार्यक्रम में प्रख्यात कवि मंगलेश डबराल को आमंत्रित किया गया । मंगलेश डबराल ने अपने वक्तव्य में कविता की बुनावट व रचना प्रक्रिया पर बात करते हुए गद्य में

विस्तार पाती कविता को अनुभूति और संवेदना का संश्लेषित रूप कहा। साथ ही यह भी कहा कि कविता का विशेषत्व समाप्त होना उसे अधिक सहज बनाता है। इसके अतिरिक्त श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय और डॉ. अंबेडकर प्रतिष्ठान के संयुक्त तत्वाधान में हिंदी विभाग 14-15 फरवरी 2019 को अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी 'गुरु रविदास, संत कबीर और अंबेडकर का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक योगदान' का आयोजन भी करने जा रहा है। इस कार्यक्रम में देश के भिन्न-भिन्न कोनों से वक्ताओं जैसे:- समाजशास्त्री प्रोफेसर विवेक कुमार, हिंदी विभाग अध्यक्ष प्रोफेसर मोहन, डॉ. जय प्रकाश कर्दम, श्री उर्मिलेश सिंह, यू.के से श्री शिंदा कौलधार, इंग्लैंड से श्री हंसराज बंगा, प्रोफेसर श्योराज सिंह बेचैन, डॉ. अनु मेहरा, सहायक प्रवक्ता एवं सामाजिक कार्यकर्त्ता डॉ. मनोज दहिया, श्री अंबेडकर प्रतिष्ठान के निदेशक श्री डी.पी. मांझी आदि को बुलाया जाएगा। साथ ही इस अवसर प्रसिद्ध रंगकर्मी श्री अरविंद गौड़ द्वारा निर्देशित 'अंबेडकर और गांधी' नाटक का भी मंचन किया जाएगा। इसके अतिरिक्त आगामी समय में हिंदी विभाग द्वारा 'बुनो कथा प्रतियोगिता, साहित्यिक प्रश्नोत्तरी, करियर काउंसलिंग आदि कार्यक्रम आयोजित किए जाएंगे।

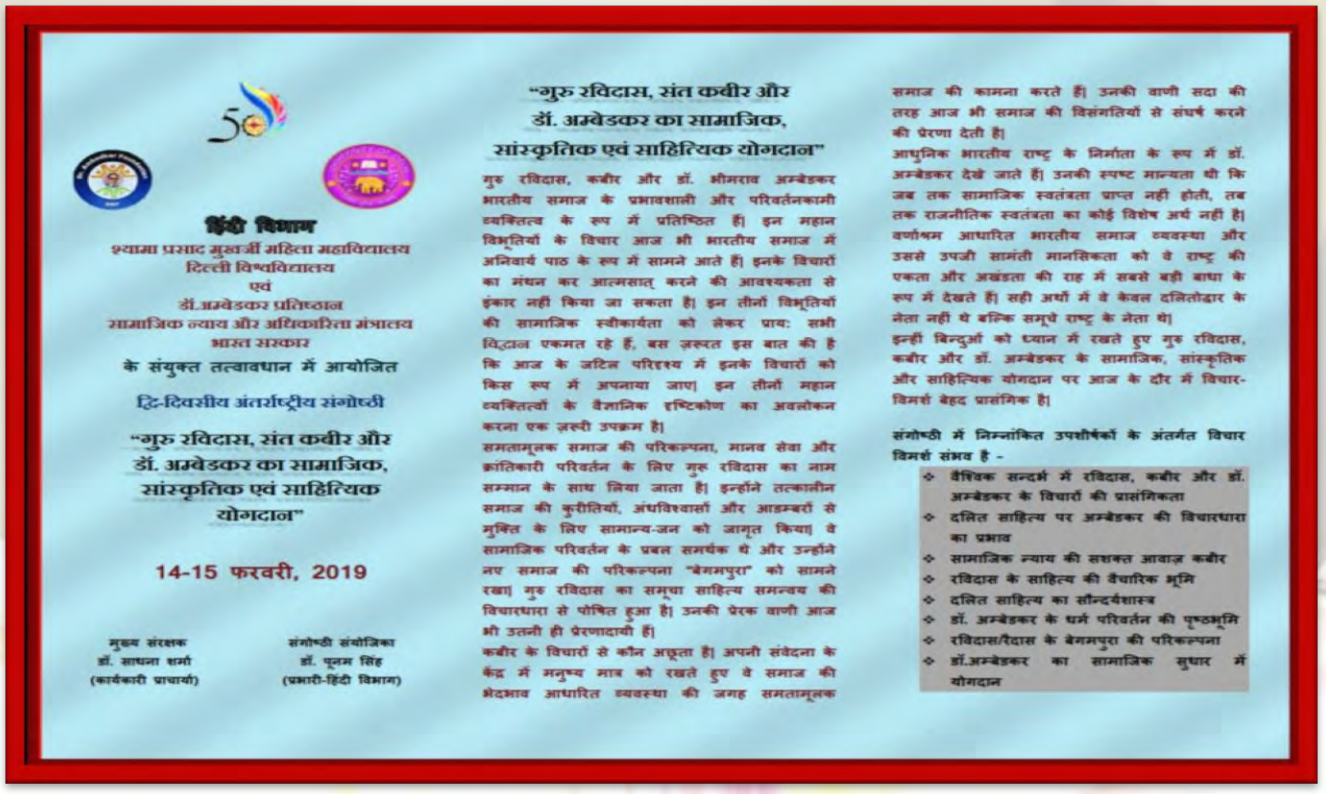

हिंदी विभाग
श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय
एवं
डॉ.अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार
के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित

द्वि-दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी

"गुरु रविदास, संत कबीर और डॉ. अम्बेडकर का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक योगदान"

14-15 फरवरी, 2019

मुख्य संरक्षक	संगोष्ठी संयोजिका
डॉ. साधना शर्मा	डॉ. पूनम सिंह
(कार्यकारी प्राचार्या)	(प्रभारी-हिंदी विभाग)

"गुरु रविदास, संत कबीर और डॉ. अम्बेडकर का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक योगदान"

गुरु रविदास, कबीर और डॉ. भीमराव अम्बेडकर भारतीय समाज के प्रभावशाली और परिवर्तनकामी व्यक्तित्व के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इन महान विभूतियों के विचार आज भी भारतीय समाज में अनिवार्य पाठ के रूप में सामने आते हैं। इनके विचारों का मंथन कर आत्मसात् करने की आवश्यकता से इंकार नहीं किया जा सकता है। इन तीनों विभूतियों की सामाजिक स्वीकार्यता को लेकर प्रायः सभी विद्वान एकमत रहे हैं, बस ज़रूरत इस बात की है कि आज के जटिल परिदृश्य में इनके विचारों को किस रूप में अपनाया जाए। इन तीनों महान व्यक्तित्वों के वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अवलोकन करना एक ज़रूरी उपक्रम है।

समतामूलक समाज की परिकल्पना, मानव सेवा और क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए गुरु रविदास का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है। इन्होंने तत्कालीन समाज की कुरीतियों, अंधविश्वासों और आडम्बरों से मुक्ति के लिए सामान्य-जन को जागृत किया। वे सामाजिक परिवर्तन के प्रबल समर्थक थे और उन्होंने नए समाज की परिकल्पना "बेगमपुरा" को सामने रखा। गुरु रविदास का समूचा साहित्य समन्वय की विचारधारा से पोषित हुआ है। उनकी प्रेरक वाणी आज भी उतनी ही प्रेरणादायी है।

कबीर के विचारों से कौन अछूता है। अपनी संवेदना के केंद्र में मनुष्य मात्र को रखते हुए वे समाज की भेदभाव आधारित व्यवस्था की जगह समतामूलक समाज की कामना करते हैं। उनकी वाणी सदा की तरह आज भी समाज की विसंगतियों से संघर्ष करने की प्रेरणा देती है।

आधुनिक भारतीय राष्ट्र के निर्माता के रूप में डॉ. अम्बेडकर देखे जाते हैं। उनकी स्पष्ट मान्यता थी कि जब तक सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं होती, तब तक राजनीतिक स्वतंत्रता का कोई विशेष अर्थ नहीं है। वर्णाश्रम आधारित भारतीय समाज व्यवस्था और उससे उपजी सामंती मानसिकता को वे राष्ट्र की एकता और अखंडता की राह में सबसे बड़ी बाधा के रूप में देखते हैं। सही अर्थों में वे केवल दलितोद्धार के नेता नहीं थे बल्कि समूचे राष्ट्र के नेता थे।

इन्हीं बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए गुरु रविदास, कबीर और डॉ. अम्बेडकर के सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक योगदान पर आज के दौर में विचार-विमर्श बेहद प्रासंगिक है।

संगोष्ठी में निम्नांकित उपशीर्षकों के अंतर्गत विचार विमर्श संभव है -

- वैश्विक सन्दर्भ में रविदास, कबीर और डॉ. अम्बेडकर के विचारों की प्रासंगिकता
- दलित साहित्य पर अम्बेडकर की विचारधारा का प्रभाव
- सामाजिक न्याय की सशक्त आवाज़ कबीर
- रविदास के साहित्य की वैचारिक भूमि
- दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र
- डॉ. अम्बेडकर के धर्म परिवर्तन की पृष्ठभूमि
- रविदास/रैदास के बेगमपुरा की परिकल्पना
- डॉ.अम्बेडकर का सामाजिक सुधार में योगदान
- हिंदी साहित्य में कबीर एवं रविदास के साहित्य की महत्ता
- कबीर/रविदास के पद और गुरुग्रंथ साहिब
- समतामूलक समाज के निर्माण में रैदास, कबीर और डॉ. अम्बेडकर की भूमिका

इसके अतिरिक्त मुख्य विषय से संबंधित अन्य महत्वपूर्ण विषयों पर भी विचार किया जा सकता है। चयनित प्रतिभागियों को प्रपत्र वाचन की अनुमति दी जाएगी।

➢ **महत्वपूर्ण तिथियाँ :-**

आलेख सारांश भेजने की अंतिम तिथि	: 17 जनवरी 2019
आलेख प्रस्तुति हेतु स्वीकृति की सूचना	: 20 जनवरी 2019
पूर्ण आलेख भेजने की अंतिम तिथि	: 25 जनवरी 2019
पंजीकरण शुल्क भुगतान की अंतिम तिथि	: 30 जनवरी 2019

➢ **महत्वपूर्ण बिंदु :-**

- शोध-आलेख की शब्द-सीमा 2500-3000 शब्द होनी चाहिए।
- यह सुनिश्चित हो कि आपके आलेख में अशुद्धियाँ न हों।
- आलेख के प्रथम पृष्ठ पर आलेख का शीर्षक, लेखक का नाम, संस्था का नाम, ई-मेल, फोन नंबर अवश्य लिखे हुए हों।
- आलेख यदि गुणवत्ता की दृष्टि से समृद्ध पाए गए तो इनका प्रकाशन ISBN नंबर की पुस्तक में होगा। पुस्तक प्रकाशन संबंधी किसी भी प्रकार का निर्णय आयोजक मंडल द्वारा किया जाएगा।
- प्रपत्र की भाषा हिंदी या अंग्रेज़ी हो सकती है।
- कृतिदेव, मंगल या यूनिकोड फोन्ट में लिखे हुए आलेख ही स्वीकार्य होंगे।
- शोध-आलेख पीडीएफ तथा वर्ड फॉर्मेट में भेजें।

• शोध-आलेख spmhindi2019@gmail.com मेल पर भेजें।

• **संगोष्ठी-प्रतिभागिता-शुल्क -**

प्राध्यापक - 700 रुपये
शोधार्थी - 500 रुपये
विद्यार्थी - 300 रुपये
(प्रतिभागिता-शुल्क दोनों दिन के लिए है, जिसमें संगोष्ठी-सामग्री, प्रमाण-पत्र, दोपहर का भोजन एवं जलपान शामिल है)

• संगोष्ठी-प्रतिभागिता-शुल्क ऑनलाइन माध्यम से भुगतान किया जा सकता है।

• भुगतान संबंधी रसीद की सॉफ्टकॉपी spmhindi2019@gmail.com पर मेल करें और उसकी हार्ड-कॉपी संगोष्ठी के दिन अपने साथ अवश्य लाएं। बैंक संबंधी विवरण निम्नलिखित हैं-

NAME OF ACCOUNT HOLDER	PRINCIPAL, SHYAMA PRASAD MUKHERJI COLLEGE
BANK NAME AND ADDRESS	INDIAN OVERSEAS BANK, SPM COLLEGE,ROAD NO.57, WEST PUNJABIBAGH, NEW DELHI-110088
ACCOUNT NUMBER	176001000000115
IFSC CODE	IOBA0001760
TYPE OF ACCOUNT	SAVING ACCOUNT
MICR	110020043

•• संगोष्ठी के दिन भी रजिस्ट्रेशन स्वीकार्य होगा।

संगोष्ठी स्थल -
राजीव गाँधी सभागार(ऑडिटोरियम)

आयोजन समिति
डॉ. पूनम सिंह (संयोजिका)
डॉ. देवकी हांडा
डॉ. गीता शर्मा
डॉ. वसुंधरा राय
डॉ. मीनू गेरा
डॉ. शगुन अग्रवाल
डॉ. शिवानी जॉर्ज
डॉ. विभा नायक
डॉ. सपना सिकेरा
डॉ. गगन बाकोलिया
डॉ. प्रेम शंकर पाण्डेय
डॉ. कुलभूषण शर्मा
डॉ. चारु गोयल
डॉ. अलका आनंद
डॉ. उर्वशी
डॉ. वंदना
डॉ. अंतिमा

छात्र समिति(साहित्यिकी)
तृतीय वर्ष – मेधा शर्मा(अध्यक्षा), स्वाति,नेहा, पल्लवी, मरियम ख़ातून, अंजलि, मानसी गोयल , भावना गौतम
द्वितीय वर्ष -वैशाली वाधवा(उपाध्यक्षा), दीपशिखा, आयशा अंसारी , मानसी शर्मा
प्रथम वर्ष – हिमांशी(सचिव) , जीनत(सचिव), याशी मिश्रा, शिखा

**संगोष्ठी संबंधी नवीन सूचनाओं के लिए कृपया महाविद्यालय की वेबसाइट देखते रहें –

http://spm.du.ac.in

अथवा संपर्क करें-
डॉ. गगन बाकोलिया:-9711531255
डॉ. प्रेम शंकर पाण्डेय:-9818081992
डॉ. वंदना:-9650086589

हमारा हिंदी विभाग